'पुष्टि मार्गीय सार संग्रह'

रचियता-गो० श्री रमणलाल जी महाराज मथुरा वाले

* श्री हरि *

[श्री मद्गोस्वामी १०८ श्री रमणलाल जी महाराज रचित]

पुष्टिमार्गीय सार संग्रह

श्री गोपीजनवल्लभाय नमः ।

कृष्णास्यंवल्लभाचार्य्यं तथा श्री विट्ठलेश्वरम् ।
वन्दे श्रीगोकुलाधीशं ग्रन्थ सम्पूर्ति सिद्धये ।।

उत्थानिका—अथ मर्यादामार्ग तथा पुष्टिमार्ग कूं एक ही समझ रहे हैं। तथा मर्यादा पुरुषोत्तमादि अंशकलान में और पुष्टिस्वरूप पूर्ण पुरुषोत्तम में तारतम्य नहीं जाने, तथा मर्यादा पुष्टिलीलान कूं एक समझे, तारतम्य रंचहू नहीं जाने ऐसो अन्यथा ज्ञानरूपी भ्रम तथा पुष्टि-मार्गीय सेव्य स्वरूप और शुद्ध पुष्टि भक्ति मार्ग को स्वरूप और पुष्टिभक्त तथा पुष्टि लीलान के स्वरूप कूं यथार्थ नहीं जाने ऐसे मनुष्यन कूं अज्ञान निवृत्ति पूर्वक पुष्टिमार्गीय ज्ञान की प्राप्ति के लिये पुष्टिमार्गीय सारसंग्रह ग्रंथ निरूपण करें हैं। क्योंकि यथार्थ स्वरूप ज्ञान बिना मुख्य फल सर्वथा ही नहीं प्राप्त होय हैं और मनुष्य देह बारम्बार मिले नहीं है, परम दुर्लभ है, क्षणभंगुर है, तामेंहू भगवान् के प्रिय अनन्य भक्त सत्पुरुष तिनको दर्शन भाषण भगवत वार्तानि को श्रवण अति दुर्लभ है और वह भगवत अनुग्रहैकलभ्य है। साधनन् सूं प्राप्त नहीं होय है। तातें सर्व दुःख की निवृत्ति के लिये और परम आनन्द सुख भगवत् प्राप्ति के लिये अत्यन्त आदर पूर्वक दृढ़ आश्रय अनन्यता पूर्वक शुद्ध पुष्टिभक्ति-मार्गीय सार को ग्रहण प्रीति-

पूर्वक करे। अनेक शास्त्रन के भ्रमजाल में चित्त नहीं भ्रमानों, क्योंकि कलियुग के जीवन की मन्द ते हू मन्द तो मति है और मन्द भाग्य हैं। और ताहू में रोग ग्रस्त है, उद्योग प्रतिबन्ध लौकिक विषय भोगासक्त हैं, विक्षिप्त जैसे मन चंचल है। भ्रान्त है, जिव्हा उपस्थ में परायरण हैं, अनेक दुःखन सों विकल हैं, अनेक उपद्रवन करके युक्त हैं। आयुष्य को प्रमाण नहीं है। मृत्यु रूप नदी के किनारे पै सर्व जगत ठाड़ो है कोई या पार है, कोई वा पार हैं, कोई गाँठ बाँधि के तैयार है। याते सर्व संकट त्यागिके श्रीकृष्ण को ही भजन सेवन नाम कीर्तनादिक करनो उचित है याही में कल्याण है याही ते पुष्टिमार्गीय सार संग्रह ग्रन्थ श्रीआचार्य श्रीप्रभु-चरण श्री गोकुल अनन्य स्वामी के चरणकृपा बलतें श्रुति स्मृति श्रीभागवतादि पुराण स्वमार्गीय ग्रन्थन के अनुसार वर्णन करें हैं।

यह अपार संसार रूपी सागर के तरिवे में नौका रूप मनुष्य देह ही है। ताकूं प्राप्त होय करिके भी जो संसार रूपी समुद्र की पार न जाय तो अतीव मूर्ख है। वो अपनपे को नाश आप ही करे हैं जो कभी तो संसार समुद्र में प्राप्त जो कोई जीव ताकूं भगवदनुग्रह सो श्रेष्ठन को उपदेश होय तब ही अविद्या दूर होय है। और यथार्थ भगवत्-स्वरूप को ज्ञान भी तब ही होय है। और तब ही परमेश्वर के गुणानुवाद के श्रवण, कीर्तन, स्मरण, वन्दन को करे इत्यादिकन सों दुःख की निवृत्ति होय है, और जन्म-मरण सों आदि ले असंख्यात दुखन ते छूटे है। और परमानन्द स्वरूप जो परमेश्वर तिनको निश्चय ही प्राप्ति होय है, ताही के लिये या संग्रह में पहिले श्रीपुरुषोत्तम धाम को निरूपण करिके श्रीकृष्ण को स्वरूप निरूपण कियो है।

अथ पुष्टि धाम को वर्णन करें हैं:-

वो विष्णु को परम पद है, मंगलन को भी मंगल

है, गुणन ते अतीत है, पर जे सत्य लोकादिक तिन सों भी परे है। परमानन्दरूप जे लीला तिनसों युक्त है, तेजोमय है, रोगादिकन करके रहित है। तहाँ स्थित नहीं लिपायमान रसरूप बहुत उज्ज्वल अपने ही आधार बारो तर्क करिवे में आवे नहीं, प्रकाशमान बड़ो शोभायुक्त सगुण निर्गुण सो प्राकृत गुण ते रहित नित्य शुद्ध रूप सनातन आकार सहित और निराकार सो प्राकृत आकार रहित स्वच्छ प्रकाश युक्त कल्याण रूप वो कहवे में आवे नहीं, ऐसो व्यक्त अव्यक्त एक ही, अपनी इच्छामय खंडन सों रहित नित्य नाना प्रकार की मणिन सों मंडित सबको आधार, सबको कारण, सब कारणन को भी कारण, नित्य ही आनन्द युक्त बाधान सों रहित सुबोध सुख के देवे बारो अथवा सुबोध जे भक्त तिनको सुख को देवे वारो शुभ के देवे वारो, सार भूत जन्म मृत्यु जरा के दूर करिवे बारो, मनकों रमणरूप परमधाम सुमनोहर श्री गोकुल है। तैसे ही बृहद्वामनपुराण में भी श्रीमद् आदि वृन्दावन में, गुणातीत पुष्टिधाम को स्वरूप कह्यो है। जहाँ वृन्दावन नामको वन है, कल्पवृक्षन के जो मनोरम निकुंज तिनसों युक्त है। सब ऋतुन के जे सुख तिनसों युक्त है। जहाँ भली भली झरनान वारो जो

गुहा तिनसों युक्त रत्नधातुमय शोभायमान भले भले पक्षिन के समुदायों सों युक्त श्रीगिरिराज है । जहाँ निर्मल जलवारी श्रीयमुनाजी विराजे हैं । नदीन में उत्तम रत्नन तें जड़ित हैं । दोनों तट जिनके हंस और कमल सों युक्त हैं । नाना प्रकार के जो रास के रस सों उन्मत्त श्रीगोपीजनन को समुदाय है; ता समुदाय के मध्य में स्थित किशोर आकृति बारे अच्युत श्री कृष्णचन्द्र हैं ।

या रीत सों धाम को वर्णन करिके धामी श्री कृष्ण पुष्टिस्वरूप को निरूपण करे हैं वेद और श्रीकृष्ण के वचन भगवद्गीता पुष्टिमार्गीय प्रमाण चतुष्टय । और वेदव्यासजी के सूत्र और वेदव्यासजी की समाधि भाषा चार प्रमाण हैं । ऐसे निबन्ध में श्रीमहाप्रभुन ने कह्यो है । ताही क्रम सों और स्वमार्ग के ग्रन्थन के अनुसार सों, सब यहाँ निरूपण कियो जाय है ।

पहिले कह्यो भयो शोभायमान आदि वृन्दावन जो गोकुल धाम में विराजमान नित्य लीलान सों युक्त किशोराकृति जो पुष्टिस्वरूप परम श्रीपुरुषोत्तम तिनके स्वरूप को निरूपण करें हैं ।

कृषि ये सत्ता को कहिवे वारो है । और ण ये शब्द निवृत्ति को कहिवे वारो है । इन दोनोंन को

एकता जो है सोई परब्रह्म कृष्ण ऐसे कह्यो जाय है,अथवा कृषि जो है,सो तो निरचेष्ट बचन है और साकार भक्ति के कहिवे वारो है। और देवे वारे को कहिवे वारो है। यासूं कृष्ण नाम कह्यो जाय है और भी प्रमाण हैं। वो पुरुष रसरूप है। जहाँ मन करिके सहित वाणी अप्राप्त होय के फिर आवे है। वो अक्षर सूं भी परे है जो परब्रह्म को आनन्द जाने है वो कोई सों भी भय नहीं पावे। और भी श्रुत प्रमाण हैं, रस कों प्राप्त करके मनुष्य आनन्द मग्न होय जाय, और जो परमानन्द को प्राप्त भयो है सोई ऐसो है दूर भये हैं, अनिष्ट जाके और दूर भये हैं, अविद्या तथा पाप जाके इत्यादि बचन अथर्वण उपनिषद् में है वो परब्रह्म लौकिक प्राणवायु करके रहित और लौकिक मन करिके रहित स्वच्छवर्ण अक्षर ते पर पर सूं भी परहै वो पूर्ण है, पूर्ण सों भी पूर्ण है, पूर्ण की पूर्णता को लैके पूर्ण है शेष रहे है। श्रीकृष्ण ही परम देवता है, ऐसे यजुर्वेद में भी लिख्यो है और हू प्रमाण है श्रीकृष्णचन्द्र ही निरन्तर ब्रह्म है, तैसे ही श्रीगीताजी में भी लिख्यो है,वो परम पुरुष अनन्य भक्ति सों प्राप्त होय है, नाशवारो जो भाव है,ताकूं अधिभूत कहें हैं और पुरुष कों अधिदैव कहे है। हे अर्जुन अभ्यास और योग सों युक्त जो अनन्य

गामी मन तासों परम पुरुष दिव्य स्वरूप को, चिन्तन करे वो ही सर्व की गति है। भर्ता है, प्रभु है, साक्षी है, निवास है शरण है, मित्र है। अब वेदव्यास जी के सूत्र को प्रमाण कहें हैं वो आनन्दमय है अभ्यास ते ही आनन्दमय धर्म को उपदेश है। तैसे ही श्रीमद्-भागवत में वेदव्यास जी की समाधि भाषा में कह्यो है अन्य जो अवतार अशंकलात्मक है और श्रीकृष्ण तो स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम ही हैं, यशोदानन्दन ये कृष्णचन्द्र-महाराज जैसे भक्तन कों सुख देत है तैसोज्ञानीन कों नहीं देत हैं तैसे ही नारद पंचरात्र में भी है आनन्द-मात्र है कर पाद मुख उदरादि जिनके सब जगे भेद सो रहित आत्मा है।

अब पुष्टि सृष्टि कों कहत हैं —

'रसोवैस' इत्यादि वाक्यन सों प्रतिपादित नित्य शुद्धाद्वैत, सदानंद श्रीकृष्ण पूर्णब्रह्म नित्यानंद श्रीगोकुलेश मूलस्वरूप अकेले क्रीड़ा करिवे की इच्छा करत भये। तहाँ प्रमाण, वो, एकाकी रमण करें नहि याते वो दूसरे की इच्छा करत भये, यही पुराण में कह्यो है, एक ही रसरूप श्रीकृष्ण दो रूप करिके श्रीस्वामिनी जी और श्रीकृष्ण रूप सों रात्रि दिन क्रीड़ा करें हैं, तिन स्वामिनी जी श्रीकृष्णजी के अर्थ नमस्कार है। वो तो लक्ष्मी अमित

है, और भजनानन्द रूपा राधा है । सो पुरुषोत्तम अभिन्न है, और पुष्टि सृष्टि तो तिनके अङ्ग सो प्रगट भई है । "मैं एक हूँ और बहुत होंऊँ" तथा भी पुराण में वाक्य हैं । सो मूल लीला की ब्रह्मा जुदी अर्थात् ब्रह्मा की नाँई नई बनाई अर्थात् पुष्टि को काय आनंदमात्र कर पादादिकन सों उत्पन्न करी याते ही सृष्टि की नित्यता आनन्दमयता आप ही सि है ऐसे गुणन सों युक्त जो पुष्टि सृष्टि तिनके संग पु लीला के प्रवर्त्तक श्री पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण म के पाखन को शिखा में धारण करत भये वो सु घूँघरवारे बारन सों युक्त है । श्री मुख जि भृकुटी रूप धनुष में धारण कियो है बाण कस्तूरी करके चित्रित है, अंग जिनको और कमल सदृश हैं, नेत्र दोनों जिनके और मोतिन की मा सों युक्त है कंठ उत्तम है. नासिका जिनकी सरस अधर ओष्ठ जिनको त्रिवलिन सों युक्त कंठाभरण युक्त है । कंठ जिनके फूले फूले हैं, दोनों गाल जि चिबुक को धारण करे सुवर्ण कौस्तुभमणि के धा करे भये वनमाला सों शोभायमान हैं । भली भ सोने की मणिन की बड़ी बड़ी जो माला तिन अतीव ही शोभायमान है । सुवर्ण की बड़ी ब

मालान सों शोभायमान है दोनों जङ्घा जिनकी अनेक रत्नन सों जड़े भये हैं , हाथ के कड़ा जिनके बाहून के मध्य में स्वर्ण के बने भये उत्तम बाजून सों शोभायमान बहुत से फूल और तुलसी सों बनी जो वनमाला तासों सुशोभित हैं नाना वर्ण के वस्त्रन को है पटका जिनके त्रिभंग ललितता में प्रथम कटि भाग के बतावन वारी जो कौंधनी ताके शब्दन सों शोभायमान है दोनों चरणारविन्द में स्वर्ण मणिन सों जटित हैं, नूपुर जिन के वो सुन्दर पीताम्बर को धारण कर रहे अपने नख रूपी चन्द्र सों जगत्रय को प्रकाश करिवे बारे, और कछुक चलायमान है । उपना जिनको ता करिके शिर के भेद को दिखाय करिके चलित है, मकराकृति कुंडल जिनके जो अतिशय रस के देवे बारे नृत्य करत नयनन कों आनन्द देत हैं जो रसानुभव में लोलुप गोपीजन के मध्य में स्थित है, जो रासलीला मे परायण विशेष करिके विहार करन बारे, जो त्रिभंग ललित भुजान सों वेणु को धारण करें हैं । वृन्दावन को एक ही फल के देवे बारे अपनी मुरली को बजावत भक्तन को मन मोहत है और जगत् को क्षण क्षण मे रोध करत जड़ता को प्राप्त करें हैं । जो पक्षी और पशुन को मौन के करवायवे वारे हैं । जो मधु धारान

सों वृक्षन के भीतर आनन्द देत हैं जो अपने चरणार-विन्दन सो विचरिके ब्रज की पृथ्वी को ताप दूर करत हैं, जो श्रीयमुनाजी में जलक्रीड़ा करिवे में अतिहि प्रसन्न हैं, रसात्मक, आप रसस्वरूप, जो भक्त अपने तिनके समूह सों युक्त हैं जो अपने अनुभव सौं जानो जाय ऐसो जो आनन्द ताको देत हैं। विरह में निरन्तर ही निजलीला को अनुभव करायवे वारे जो साकारा-नन्द स्वरूप सो भक्तन के हृदय में बास करें हैं सोई श्रीवल्लभाष्टक में लिख्यो है। श्रीमत्वृन्दावनचन्द्र करके करके प्रगट कियो जो रसिक आनन्द ताको जो समूह-को रूपता में स्फूर्ति जाकी रासादिलीलामृत ताको जो समुद्र ताको समूह तासों युक्त है सर्वस्व जिनको, यासू आप श्रीकृष्णचन्द्र रासलीला सदैव ही करे है। रात दिन ये सिद्धही हैं। श्रीपूर्णपुरुषोत्तम के प्रादुर्भाव को कारण बृहद्वामन पुराण में है। ब्रह्मानन्दमय लोक व्यापिबैकुन्ठ है, नाम जाको निर्गुण प्राकृत गुण रहित जाको आदि और अन्त नहीं होय वैसे वेदन को मुख्य स्थान है,ना लोक में बास करिवे बारे वेदन के परे ते हूँ परे सो साक्षातपूर्ण पुरुषोत्तम चिरकाल पर्यन्त स्तुति कों सुनिकें प्रसन्न हायकें परोक्ष वाणी सों बोले मैं तुम से प्रसन्न भयो जो तुमकों मनोभिलाषित बर होय सो

माँगो, तब श्रुति कहे हैं। परमेश्वर श्रीकृष्ण अच्युत तुम्हारे नारायण आदिरूप तो हमने जाने हैं परन्तु हे अच्युत ! तिनमें हमारी वस्तु बुद्धि नाहीं है ब्रह्म सर्वेश सगुण है याते बुद्धि हमारी गुण में नाहीं है यासों पुराविद् जो तुम्हारो आनन्द मात्र रूप को जाने है सो रूप हमकों दिखावो, जो तुमको हमारे अर्थ बरदान देनो है या बात कों सुनिके प्रकृति ते पर जो केवल अनुभव मात्र सों जानों जाय अक्षर के मध्य में प्राप्त ऐसो अपनों लोक दिखावत भये और दिखायके पीछे आप बोले और कहो तुमकों जो इच्छा होय सो वो हम करें और तुमने मेरो ये लोक देख्यो जाते और उत्तम कोई भी लोक नाहीं है। औप परे हू नाहीं हैं। तब श्रुति कहे हैं करोरन कामदेवन सों कोटि गुण लावन्य है जिनमे ऐसे तुम्हें देखिकें हमारे मन क्षोभ कों प्राप्त भये हैं और कामिनी भाव को प्राप्त भये, याते जो तुम्हारे लोक को वास करिबे बारी गोपीजम तुम्हें पति मानिके परम तत्व सों भजे हैं, तैसे ही हमारी हू इच्छा है। तब श्री कृष्णचन्द्र बोले के तुम्हारो मनोरथ दुर्घट और दुर्लभ है, तो भी मैंने अनुमोदन भले प्रकार सों कियो है, यासूं सत्य होयवे कूं योग्य है। अबकें आवन बारो जो सारस्वत कल्प तामें ब्रह्माजी सृष्टि करिबे कूं

उद्यत होय तब तुम व्रज में गोपी हूजो भारत क्षेत्र भूमि में मेरे श्रीमथुरा मंडल में, मैं तुम्हारो रासमंडल मे प्रिय करिवे बारो होऊँगो भावसों मेरे में सुहृढ़ स्नेह करिके मोकूं प्राप्त होयके कृतकृत्य होय जाओगी, वाही पहिले प्रतिपादित श्री गोकुलेश पूर्ण पुरुषोत्तम अपनो दीयो भयो जो वर ताके प्रतिपालन को श्रीमान जो आदि व्रज-मंडल वृन्दावन श्रीगोकुल में नन्दराय के घर में पूर्व यशोदाजी कूं दीयो जो बरदान ताकी सत्यता दिखायवे कों सत्य संकल्प पूर्ण काम आप श्री यशोदाजी के विषे शुभ सम्वत् में, दक्षिणायन सूर्य में वर्षा ऋतु में महामंगल के देवे बारो जो भादों ता के कृष्णपक्ष में शुभ तिथि अष्टमी बुधवार रोहिणी नक्षत्र में अर्द्धरात्रि के समय श्रीपुरुषोत्तमजी भावात्मक स्वरूप सों योगमाया करिके सहित प्रगट भये, अब श्रीयशोदाजी में प्रागट्यको हेतु कहें हैं। अष्ट वसून मे में उत्तम द्रोण है, नाम जिनको अपनी धरा नाम की भार्या के संग तप करत भये, इत्यादि वचन मूल में है। तिनके भाग्य को विचार करे हैं, मनुष्य देह सों जो नन्दराय जी को व्रज में जन्म सो प्राकृत ही है। सो श्रीसुबोधिनीजी में कह्यौ है नन्दोत्सव में प्राकृत हू नन्दराय जो महामना होत भये या करिके

आधिभौतिकता दिखाई, धर्म बारे हैं यासूं आध्यात्मिकता दिखाई है तपश्चर्या करिकें परिपूर्ण दशा में पुत्रीभूत जनार्दन में अन्य कामना छोड़ करिके भगवान ही पुत्र होय या प्रार्थना कूं आधिदैविकता दिखाई तामें प्रमाण "द्रोणोवसूनां" प्रवर है अर्थात् आठ जो वसु तिनमें द्रोण ही उत्तम है। काहे सूं लोक की कोही भी कामना नाहि है। प्रवर यासूं जो प्रकर्ष करिकें वर यहाँ परमेश्वर नें पुत्रपनो स्वीकार कियौ याही सूं प्रवरता है। याही ते श्रीसुबोधिनी जी में नामकरण प्रकरण में बसुदेव को और नन्दराय जी को समानाधिकरण सों आधिदैविक वसुदेव जो तुम सों तुम्हारे ही भये हैं, ऐसो कहबो बनें हैं अथवा बसून की जो देवी सो लक्ष्मी वसुदेवी वो जाके होय सो वसुदेव तातें द्रोण वसून में उत्तम है तिनको जो अवतार नन्दजी तिनकूं भी बसुदेध तो योग सूं प्राप्त है। तिनको जो पुत्र सो वासुदेव सर्वातीत सबतें जुदे। रस रूप जो परब्रह्म पूर्णपुरुषोत्तम श्रीकृष्णजी तिनमें जो पुत्र वात्सल्यरस सोई इनको रोध मुख्य भक्ति तासों आनन्द को प्राप्त होय, सो नन्द अथवा बाललीला के आनन्द के अर्थ हैं। भूतल पें आगमन जिनको ऐसे सब श्रीव्रजरायजी कृत सर्वोत्तम विवृत्ति तामें है। तैसें ही

कृष्णोपनिषद् में श्रीनन्दराय जो कूं परमानन्द के स्फुरण सों नन्दराय बाललीला के मुख्य अधिकारी भक्त हैं। बालस्वरूप और बाललीला के अनुभव करिवे वारे जे नन्दादि भक्त तिनकों विकार सों रहितता और आनन्दमयता और नित्यता दिखाई है। धरा भार्या के संग यासों श्रीयशोदाजी कों हू अधिभौतिकता और आध्यात्मिकता और अधिदैविकता हू जाननी जो महावन में प्राकृत मनुष्य देह सों श्रीयशोदाजू की जन्म की प्रतीतता करके आधिभौतिकता दिखाई सो प्राकृतता दामोदरलीला में जो भगवान को बंधन करत भई सो तामस भाव सों तामस तातें प्राकृत ताहे ये श्रीसुबोधिनी जी में लिख्यो है धर्म विशिष्ट सो आध्यात्मिकता है जैसे द्रोणपसुन में उत्तम तैसे ही धराभार्या उत्तम है अन्यथा जो तिनको सोही स्वभाव न होय तो तप कैसे सिद्ध होय वरानाम श्रेष्ठ है। लौकिक जे वासना तिनसों रहित प्रवरा यासूं जो भगवान नें याकों पुत्रपनों स्वीकार कीयो तासों ही आधिदैविकता दिखाई, देवी जो प्रकाशवारी होय ताय कहें हैं वसुदेवी सोही श्रीयशोदा नन्दराय की ब्रज में भार्या भई, तातें श्रीयशोदाजी और देवकी जी, ये दो नाम हैं सो चक्रवर्ति में लिख्यो है द्वै नाम्नी नन्द

भार्या या यशोदा देवकी तिन नन्द की भार्या के दो नाम हैं यशोदा और देवकी यातें ही देवकी को और श्री यशोदाजी को भिन्नभाव है, यश के देवे वारी कूं यशोदा कहें हैं सो कृष्ण को जन्मसूं त्रिलोकी में यश प्राप्त भयो और याको जो रसात्मक परब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तम में पुत्र वात्सल्य सों निरोध अतिशय ये ही मुख्य भक्ति है, ये ही यश की देवी रूप भक्ति नित्य-लीला में है। सो भगवान के खिलायवे वात्सल्यता करवे कू प्रगट भई है। बाललीला रस के अर्थ है आगमन जिनका श्रीयशोदाजी यातेही बाललीला को अतिशय अधिकार वारी है, यातेही ताको विकार को अभाव और परमानन्द मयता और नित्यता है। तहाँ प्रमाण साक्षात् पुरुषोत्तम गोप वेष कों धारण करे हैं। ये श्रुति हैं, और भागवत में हू कह्यो है, नन्दराय जी के जब पुत्र उत्पन्न भयो तव प्राप्त भयो है, आनन्द जिनको बड़े मन वारे होत भये ये गोपिकानन्दन ज्ञानी कूं, तैसो सुख नहीं देत हैं। और हू वहाँ ही प्रमाण है। कात्यायनी व्रत में कन्या ने बरदान माँग्यो है, नन्द गोप के पुत्र कूं हमारे पति करो और गोपन को भी कथन है हे नन्द ! हे ब्रजनाथ ! तासों तुम्हारे पुत्र में हमकूं शंका होय है, और गोपीन को वचन तेरो पुत्र है

और चक्रवर्ति टीका में भी लिख्यो है। नन्दपुत्र को जो पद ताकों प्राप्त होत भये, और हू वहां लिख्यौ है नन्दराय की स्त्री यशोदा के एक कन्या और एक पुत्र वे दो उत्पन्न भये जो पुत्र हतो सो तो गोबिन्द है नाम जाको और जो कन्या सो अम्बिका मथुराजी को गई और गोपालतापनीय नामके ग्रन्थ में भी लिख्यो है। यशोदानन्दन कूं वन्दना करूँ हूँ गोपाल को रूप है जिनको सम्पूर्ण लोक के मङ्गल रूप नन्दगोप के पुत्र देवतान करिके आदर करिवे योग्य सोई श्रीसुबोधिनी जी में लिख्यौ है। श्रीपूर्णपुरुषोत्तम तो माया के संग नन्दराय के ही घर प्रगटे, ऐसे स्पष्ट ही लिख्यौ है। अब कुमार अवस्था में प्राप्त ऐसे नन्दनन्दन जू को स्वरूप वर्णन करें हैं श्रीयशोदा जी की गोद में खेलत लाड़ लड़ावै को सुन्दर घूँघरवारे बारन की है बेणी जिनकी मोतिन की मालान सों है शोभायमान, मस्तक जिनको, चलायमान हैं कुंडल जिनके और अलकावलि जिनकी मोतिन की पंक्तिन सों मस्तक सो कर्ण पर्यन्त सुशोभित जिनके कस्तूरी के तिलक सुशोभित है मस्तक के आभूषण तिनसों अति सुन्दर है। केशर को चित्र-विचित्र कमलपत्र है। जिनके दोनों कपोलन कुंडल की चलन सों द्युतियुक्त है, कान जिनके चिबुक में हैं हीरा

जिनके काजल आँज्यौ है नेत्रन में जिनके नयनन के प्रान्त तक स्याही की बिंदुन सों सुशोभित है। वो सुन्दर लाल अधर सों स्रवै है ज्ञान और बोध के देवे वारो रस जिनके वात्सल्य भाव सों अति सुलभ है रस को जो वोधन तामें तत्पर है अपने मुखारविन्द में अपने चरण को जो अँगूठा के प्रवेश करिवे में तत्पर है। भक्तिबारेन की गति क्रिया शक्ति के प्रबोध करिवे वारे आप ही हैं। कटि सों लगी भई है मोतिन की माला तिनसों शोभित है। ताके ऊपर मणिन सों जटित है। स्वर्ण की माला तिनसों अतिहि प्रिय है, वक्ष:स्थल शोभायमान है। वाघनखा जिनके मोती और सुवर्ण की मालान सों व्याप्त है। प्रकाशित है उदर जिनको भुजान में सुशोभित जड़ाऊ सुन्दर बाजू जिनके हाथ मे जो पटका तासों शोभा बारे हैं। कंठ में है माला जिनके हाथ की दशों आँगुरीन में जड़ाऊ छल्ला अँगूठी जिनके किंकणी और पटका को गुच्छान सों सुशोभित है। कमर जिनकी वो सुन्दर पेंजिन सौं युक्त धीरे धीरे चलिबे सौं, गोपीजन के मोह करायवे बारे नहि धारण किये हैं, वस्त्र जिननने अपने नखन की कान्ति सों जीते हैं, चन्द्रमा को जिनने अपनो जो परछाँई ताकौं देख देख के हास्य सहित है। मुखारविन्द

जिनको वो व्रजरज सों लिपट रह्यो है । श्रीअंग जिनको सदाही सर्व शिरोमणि है सम्पूर्ण लीलान में चतुर लीलान सों दूसरो कछू भी जाने नहीं कन्दर्प सों करोड़न गुनी है,लावण्यता जिनकी माननीन- के मान को जो दर्प ताके दूर करिबे वारे गोपीजनन के यहाँ दुबक के माखन चुरायबे वारे गोपन कों संकेत- सों बुलाय लेंहै, परमानन्द समूह सदा- दुःखन सों विवर्जित हैं । दुःखियान को दुःख नाहिं देखत हैं और सुखियान को प्रपंच भी नाहिं देखे हैं। दयाके समुद्र अपने वाक्यनके करिबे में हैं, प्रपंच को नाश करिबे में अपने विषय निरोध करायबे में तत्पर हैं, क्षण-क्षण में अपने में बालभाव करिबे में चतुर है । क्षणभर में क्रोध करें, क्षणभर में हँसे, जब कोई गोपीजन कछुक वस्तु दे तब आप बहुत ही प्रसन्न होय हैं । अपने भक्त जो तिनके हृदयकी वार्ता जानबेवारे ताते अतिरिक्त और कछू ही नहीं है । शंका जो कहो वसुदेवजू के घरमें भगवान प्रगट भये तो वहाँ कैसें स्वरूप सो और कौन प्रकार सों प्रगट भये याको समाधान करिबे कों कहत हैं तहाँ प्रथम भगवत् धाम को वर्णन करत हैं । परमेश्वर को वो धाम है सो श्रीगीताजी में भगवान नें कह्यो है, जाको सूर्य प्रकाश न करत है न चन्द्रमा न अग्नि

जामें यायके फेर आवे नहिं सो मेरो धाम है। अक्षर बैकुन्ठ तेजोमय सनातन बैकुन्ठ है जहाँ ब्रह्मानन्दरूप लक्ष्मीजो हैं और पुरुषोत्तम श्रीहरि हैं जाते मे क्षर ते दूर हूँ और अक्षर तें भी उत्तर हूँ याते लोक और वेद मे मेरो पुरुषोत्तम नाम सो प्रसिद्ध है। सर्व कारणान को भी कारण, तेज:स्वरूप अक्षर पूर्ण पुरुषोत्तम महात्मा को परमधाम बैकुन्ठ है, नाम जाको उत्तम जरामृत्यु के दूर करिबे बारो, ब्रह्मांड ते ऊपर वायु करके धारण कियो है। तामें रत्नन के सिंहासन पै स्थित नानारत्नके अलंकारन सों सुशोभित रत्नन के बाजूबन्द, जिनने रत्नन के पावटे धारण करे भये रत्नन के कुंडलन सों विराजित हैं दोनों कर्ण, जिनके वो सुन्दर पीताम्बरकों धारण करें बनमालासों सुशोभित है शान्तलक्ष्मी धारण किये है। चरणारविन्द जिनके सत्य हैं सनातन हैं। मंद मंद मुसकान सहित है मुखारविन्द, जिनके चार हैं भुजा, जिनके सुनन्द नन्द कुमुद पार्षदन सों सेवित हैं। चन्दनसों चर्चित हैं, सर्वांग जिनके भले भले रत्नन सों जटित है, उज्ज्वल है मुकुट जिनके सम्पूर्ण ब्रह्मादि देवता कलांश कलान सों है मनु मुनीन्द्र मनुष्य और चराचर जाके अंश कलान सों हैं जाको आद्य अवतार श्रीनारायण रूप है ताके ही अंशन सों पृथिवी पर मत्स्यादि

अवतार है ऐसो जाननो जब दैत्यन करिके व्याप्त सगरी पृथिवी भई तब बड़ी दुःखित होयके अपने दुःख के दूर करिबे कूं गौ को रूप धरिके मुखपैं पड़े हैं, अश्रुसों के रुदन करत भई करुणा पूर्वक ब्रह्माजी की शरण जाय के अपनो दुःख कहत भई ब्रह्माजी ताके दुःख कों सुनि कें देवतान कों साथ लैके और पृथिवी कों साथ लेयके शिवजी को साथ लेय केक्षीरसागर के तीर पै जात भये तहाँ जायकें देवन के देव जगत् के स्वामी वृषाकपि पुरुष की सहस्रशीर्षा इत्यादि वाक्यन सों स्तुति करत भये तब ब्रह्माजी कों आकाशवाणी समाधि में भई ताकों सुनिकें ब्रह्माजी देवतान सों बोले ये सब बात श्रीभागवत में कही है सो जाननी जो समाधि में कह्यो सो कहत हैं। भगवान् पुरुषोत्तम वसुदेवजी के घर प्रगटेंगे सोई श्रीसुबोधिनी जी में स्पष्ट कियौ है, वसुदेवजी के भी अंशावतार ही है, साक्षात् भगवान् चक्रादिरूप सों नाहिं प्रगटे है तासूं सत्वके व्यवधान करिके अवतार है भगवान् नाम औरन को भी है यासू पर पुरुष ये कह्यो है सो तो अर्थात् पुरुषोत्तम नहीं ब्रह्मांड ते परे हैं या कहिवे सूं माया के प्रवर्त्तक हैं ये बात सिद्ध भई तासूं परे पुरुषोत्तम ही है सोई प्रगटेंगे और तिनकी सेवा करिवे को सुन्दरता युक्त जे सुर स्त्री अपसरा लक्ष्मी के संग

समुद्र ते उत्पन्न भई है तिनको भोग भगवान ने, नाँहि किये है ते सबरी अपनों जन्म सफल करिबे को अपने अपने योग्य स्थानन में हों और यातें देवतान को स्त्री रूप धरिके अवतार दूर कियो ता पीछे थोड़े से कालान्तर में वसुदेव देवकी को विवाह भयो तब कंस ने दायजा दैके विदा करे ता समें आकाशबाणी भई के याको अष्टम गर्भ तोंको मारेगो ये सुनिके कंस देवकी कों खंग लैके मारिवे लग्यो तब वसुदेवजी ने साम दाम दंड भेद करिके समझायो, तब तो कंस ने छोड़ दीनी ये अपुने घर गये तब कोई कालान्तर पीछे, यथा क्रमते देवकी के छै बालक कंस ने मारे ता पीछे, विष्णु को धामरूप अनन्त जो शेषजी हैं । तो सप्तम गर्भ में आये तब यदुन के निजनाथ विश्व के आत्मा भगवान् कंस को भय जानिकें योगमाया कों आज्ञा देत भये गोप और गायन करिकें शोभित जो व्रज श्रीगोकुल तामें नन्दग्रह में वसुदेवजी की स्त्री रोहिणी जी रहे हैं तहाँ जायकें देवकी के गर्भ में मेरो धाम रूप शेष हैं नाम जाको, ताकों वहाँ ते निकासिकें रोहिणी के उदर में धरदे याके अनन्तर मैं हूँ अंश भाग करके देवकी के पुत्रता कों प्राप्त होंऊँगो या प्रकार चतुर्व्यूह युक्त धर्म सहित सच्चिदानन्द प्रसिद्ध पुरुषोत्तम वसुदेव

के वहाँ होऊँगो, ऐसे कहे पीछे थोड़े से ही कालान्तर मे मथुरा में चतुर्व्यूह युक्त भगवान देवकी में आविर्भाव होत भये, पाछे तें सो श्रीभागवत में कह्यो है। के जैसे पूर्व दिशा में पूर्ण चन्द्र उदय होय है, तैसेई प्रगटे है ता समें अद्भुत बालरूप धारण कियो कमलवत् नेत्र, चार भुजा तिनमें शंख चक्र गदा पद्म आयुध धारण करे हैं, श्रीवत्सन को चिन्ह कंठ में कौस्तुभ धरे हैं, पीताम्बर धारण करे किरीट कुन्डलन कों धारण कियो है। प्रकाशमान ऐसे स्वरूप कों वसुदेव जी देखि के स्तुति करत भये। वाही समय में पुरुषोत्तम तो माया के संग श्रीगोकुल में अविर्भाव भये वासुदेव व्यूह भी यही प्रगट भये यह श्रीसुबोधिनीजी मेंश्रीआचार्य्य-चरणन नें कह्यो है ताही को टिप्पणी में तथा श्रीपुरु-षोत्तम प्रादुर्भाव ग्रंथ में स्पष्ट कियो है, जो नन्द के घर में रसरूप भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम माया के संग प्रकट भये वे ही व्यापकत्व करिके माता पिता के देखत ही प्राकृत बालक की नाहीं होत भये, ताही समय में महात्म्य के ज्ञानधारी मातृचरण श्रीदेवकीजी कों भावात्मक स्वरूप के दर्शन करिके शुद्ध स्नेह की उत्पत्ति भई तातें माहात्म्यज्ञान को तिरोभाव भयो यह कह्यो मैं तुम्हारे कारण सूं कंस ते डरपू हूँ, ताके

अनन्तर श्रीमथुराजी तें श्रीगोकुल आवत भये।

या रीति सों आये सोतो श्रीमद्भागवत में प्रसिद्ध ही है तब वसुदेवजी नन्दरायजी के भवन में श्रीयशोदाजी की शय्या में बालक कों पधरायकें वहाँ सो कन्या कों लेयकें श्रीमथुराजी आवत भये ताही समय में चतुर्व्यूहन के अंशभाग करिके केशरूप करि के नारायण विभाग सहित धर्म युक्त भगवत्सच्चिदानंद प्रसिद्ध पुरुषोत्तम वासुदेव (वसुदेव पुत्र) रसघनीभूत गुणातीत भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम नन्दराय सुत श्रीकृष्ण के विषें, जैसे मेघन में विजली लीन होय है। ताही रीति सों श्रीवसुदेवजी को लायो भयो स्वरूप अनिर्वचनीय अस्पर्शयोग में लीन होत भयो ताको प्रमाण चक्रवर्त्ती टीका में हू कह्यो है हरि के लीला के भेद में स्वरूप को भेद नियामक है जहाँ जहाँ जा अंश के कार्य की अपेक्षा है, तहाँ तहाँ वाही वाही रूप द्वारा कार्य करावें हैं आपतो भक्तन को इष्ट सम्पादन करें है इनसों अतिरिक्त कार्यन में व्यूहन को उपयोग है। दैत्य मारणादि जे अनिष्ट निवारण संकर्षण व्यूह द्वारा करावें हैं आपतो व्रजभक्तनकों मनोरथान्त फल दान करें हैं।

अब राधा स्वरूप को वर्णन करत हैं—

जैसे श्रीनन्दरायजी के घर में भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम मनुष्य नाट्य करिके आविर्भाव भये ताही रीति सों नित्यलीला में विराजमान साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम स्वरूप सों अभिन्न अपने यूथ की सखियन के के संग मुख्य स्वामिनी श्रीराधा रावल ग्राम में श्रीवृष-भानु के घर में, श्रीकीर्तिमातृचरणान में प्रादुर्भाव होत भईं।

यथा क्रम सों बड़ी होयवे लगीं वे श्रीराधा जी भजनानन्द रूप है, पर हैं, परमेश्वरी हैं, परम कल्याण रूप हैं, सुन्दर हैं, सुखदायक सुमनोहर श्रीकृष्ण की प्यारी सुशील शोभायुक्त पूर्णकाम वारी और आप तो परिपूर्ण ही हैं। वृन्दावन की अधीश्वरी सनातनी सबन के आधार रूप सर्व की कारण रूप श्रीराधा मुख्य स्वामिनी हैं सो श्रीकृष्ण के अर्द्ध तेज सूं प्रगट भई वैसी मूर्त्तिमती हैं एक ही मूर्त्ति दो प्रकार की है सो वेद में निरूपण कियो है दोय रूप तेज सूं गुण सूं तुल्य है वैसे ही पराक्रम सूं बुद्धि सूं और सम्पत्ति सूं तुल्य है और 'राधा' शब्द की व्युत्पत्ति सामवेद में निरूपण करी है रकार है सो कोटिक जन्म के पाप कूं और शुभाशुभ कर्म कूं दूर करे है। और आकार जो

सौ गर्भ कूं, मृत्यु कूं और रोग कूं दूर करे है। और धकार है सो आयुष की हानि कूं, और आकार है सो भव के बन्धन को दूर करे हैं। और जन्म मरणादि पीड़ा कों हरे हैं, श्रीराधा शब्द को श्रवण स्मरण और उच्चारन सूं जीवन के सर्व पाप नाश कूं प्राप्त होत है तिनमें संशय नहीं है। रकार सो श्रीकृष्ण प्रभु के चरणकमल में निश्चय भक्ति और दास भाव को देय है और जो धकार है सो सबन कूं इच्छित ऐसो यह ईश्वर सम्बन्धी अनन्त सुख देत है और सर्व सिद्धि के इच्छित ऐसो सर्वोत्तम ऐश्वर्य कूं देत है। धकार है सो वे ईश्वर के साथ सहवास कूं देत है और जो अकार है सो पुष्टि सारूप्य आदि मुक्ति को देत है, और हरि सरिखे तत्व ज्ञान कों देतू है और तेज के समूह और हरि के विषैदान शक्ति देत है और यज्ञ करनो दान करनो वेद पाठ करनो तीर्थ करनो पृथ्वी की प्रदक्षिणा करनी सो सब ही राधा सेया की सोलमी कला कों प्राप्त नहीं होत हैं श्रीराधाजी की चरणकमल की रज सों पृथ्वी पवित्र होय हैं। तिनके दर्शनमात्र सूं तीनो भुवन पवित्र होंय हैं। जिनकी प्रीति श्रीकृष्ण की कथा के विषें होय है और वे सुनत ही जिनको आनन्दाश्रु और रोमांच होय और जिनको मन श्रीप्रभु की सेवा

कथादिक में रहे है। तिनकूं विद्वान लोग भक्त कहें है उनको विघ्न नहि होय है और विनको आयुष्य नाश को प्राप्त नहिं होय है। और जैसे गरुड़ के पास सर्प नहि जाय सके है, तैसे विनके पास यमदूत नहिं आय सके है और ताके समीप कूं हरि क्षण मात्र भी त्याग नहि करें हैं। और वाकूं पूर्ण अणिमादि सिद्धि प्राप्त होय है, और तिनके पार्श्व के विषे रात्रि दिवस सुदर्शन फिरे हैं। और श्रीकृष्ण की आज्ञा सूँ सुदर्शन चक्र सदा विन भक्तन को रक्षा करे है। और कोई भी वाकूँ कछू भी कर सकत नाँहि हैं, और वाके पास मृत्यु भी नहिं जाय सके है। जैसे प्रज्वलित अग्नि को देखिके पतंग आदि जन्तु पास नहिं जात हैं, व्याधि विपत्ति विघ्न वाके पास नहिं आवें हैं। ऋषि मुनि सिद्ध और सगरे देवता ताके ऊपर सन्तुष्ट होय है। और सो सबही ठिकाने निःशंक रहत है, और श्रीराधाजी की प्रसन्नता सूँ सुखी रहत हैं। जिनने सगरी पीड़ा को दूर करी है, ऐसी राधाजू जब हमारे ऊपर कृपायुक्त होय हैं तब पुष्टिमार्ग और मर्यादा मार्ग के विषे हमारे कहाँ अवशेष रह्यो, मन्दहास्य से जिनके दात की पंक्तिरूप मणि की प्रभा प्रकाशित होय रही है। ऐसी श्रीराधाजू जब कोई प्रकार सूं हमारे सू

बोले, जब मुक्ति रूप शुक्ति सों हमारे कहा प्रयोजन है। जिनके मस्तक पर मोर पंख सोहत है, ऐसे श्यामसुन्दर जिनके मुख में मन्द हास्य सोहत है, ऐसे और मुरली करिके मनोहर है, राधिकारसिक वे कृपानिधि मोकूँ अपनी प्रियाजी के चरण की किंकरी करें। श्रीवृष-भानुनन्दिनी राधाजू के प्राणनाथ और वाके श्रीमुख-रूप कमल के रसविषे चंचल भ्रमररूप और श्रीराधा-जू के चरण तल के विषे जिनने स्थिति करी है, ऐसे रसिक शिरोमणि आपकूँ मैं भजत हूँ। ऐसी श्रीराधा-जू के साथ श्रीपूर्णपुरुषोत्तम आप लीला सूँ रमण करत हैं। और श्रुतियन की अधिष्ठात्री वेदमाता गायत्री सरस्वती जो है, सो परम लावण्यता बारी चन्द्रावली जी चन्द्रभानु के घर में वाकी स्त्री सुषुमा के विषे भगवान के साथ दान मान आदि लीला करिवे कूँ प्रगट भई ताको प्रकार सर्वोत्तम की स्वतन्त्र विवृत्ति में विस्तार सूं है उल्लास और कीर्तन के विषे हू निरूपण कियो है। यह चन्द्रावली जी की वार्ता आगे कहेंगे, ऐसी श्रुतिरूप गोपिका सहचरी भई।

अब पुष्टिभक्त के निरूपण करें हैं—

यह व्रजमंडल के विषे सो ही पूर्वोक्त श्रुति, हमारी सगरीन की ऐसी करिबे की इच्छा भई है, इत्यादिसूं

जे प्रथम प्रतिपादन कियो है। सो अपने मनके इच्छित मनोरथ कूं पूर्ण करिबे कूं श्रीमदानन्दकन्द श्रीब्रजचन्द्र के संग रमण करिबे के लिये गोपिका रूप भई तामें प्रमाण गोपी औरगाय ऋचा हैं। ऐसे कृष्णोपनिषद् में कहें हैं तासूं सो गोपीजन भगवान को रूप है जीव रूप नहिं है, लीला के लिये भगवान ने अपने शरीरते निकासी हैं। ऐसे बृहद्वामनपुराण में कह्यो है, बृह्मा कहे है, मैंने प्रथम नन्दरायजी के ब्रजकी स्त्री के पदरज की प्राप्ति के लिये साठहजार वर्ष पर्यन्त तप कियो हतो, तथापि मोकूँ तिन गोपीन की चरणरज प्राप्त न भई। भृगु कहे हैं, हे ब्रह्मन् लोक के विषे नारद आदि वैष्णव जो हैं, तिनकों छोड़िकै गोपीन की चरणरज ग्रहण करिबे कूं तुमने काहेकूं इच्छा करी। सो मोकूं महान् संशय है, वाकूं दूर करिबे के लिये आप मोकूं विनको कारण कहो ता पीछे बृह्मा भृगु से कहिबे लाग्यो। के हे पुत्र! ब्रजसुन्दरी साधारण स्त्री नहीं हैं सो सब श्रुति हैं हे भृगु! मैं शिव और शेषभी और लक्ष्मी भी बिन स्त्रियनके तुल्य नाहि हैं बाई ते मैं निरन्तर नन्दराय जी के ब्रज की स्त्रियन की चरणरज उनकूं वन्दन करत हूँ, कि इन स्त्रियन की हरिकथा को गायवो तीनों भुवन कूं पावन करे है। जो प्रसाद कूं

गोपी औरयशोदा प्राप्त भई हैं वा प्रसाद कूं ब्रह्मा शिव और श्री अंग को है संग जाकूं अथवा जिनके अङ्ग मे जिनको आश्रय है वो श्रीलक्ष्मी भी प्राप्त नाँहि भई हैं। अर्थात् मुक्तिदायक प्रभु को जो प्रसाद गोपी यशोदा को प्राप्त भयो है, सो ब्रह्मादिक देवताओं को भी दुर्लभ है। और सोलह हजार ऋषि कुमार ने अति उग्र तपश्चर्या करिके पीछे श्रीव्रज गोकुल में गोपीजन भये, ताकों प्रमाण वाराहपुराण में है। श्रीकृष्ण के साथ रमण करिबे कूं वे सोलहहजार ऋषिकुमार गोपीन के रूप कूं ग्रहण करत भये, और तिनके साथ श्रीकृष्ण भगवान रमण करत भये। ऐसे वाक्य महाकूर्मपुराण मे है जो महात्मा ऐसे अग्नि के पुत्र तपसूं स्त्रीपने कूं प्राप्त भये, और जगत की उत्पत्ति रूप ऐसो वासुदेव श्रीकृष्ण जो अजन्मा और विभु है, विन पति कूं प्राप्त भये यह व्रज के विषे, कौन प्रकार सूं वा गोपीन नें साधन कियो कि जासूं भगवान की पत्नी भईं सो भागवत में हेमन्त के प्रथम मास में नन्दरायजी के व्रज की कुमारिका इत्यादि।

हेमन्त प्रथमेमासिनन्दव्रजकुमारिकाः।

व्रताचरण के आरम्भ में श्रीयमुनाजल में स्नानादि करिके, बालुका की मूर्ति करिके, सर्वोपचार सों,

ताको पूजन करत भईं और यह मन्त्र कों जपन लगीं। सो मन्त्र—हे कात्यायनि महामाये हे, महायोगिनि हे, अधीश्वरी, हमको प्रत्येक कों तू नन्दरायजी के पुत्र श्रीकृष्ण कों पति कर हम सगरी तेरे कूं प्रणाम करत है। वा श्लोक के अर्थ को विस्तार श्रीसुबोधिनीजी में लिख्यो है। तासूं यहाँ विस्तार नहिं करत हैं, पीछे श्रीकृष्ण भगवान यह व्रजकुमारिकान के व्रतसूं प्रसन्न होयकें मैं तुम सिगरीन कूं शरदऋतु के विषे रास-रमण करवाऊंगो ऐसे वरदान दिये। ता पीछें यह गोपिन के चीरहरण करिके सगरीन को लज्जा रूप, अन्तराय दूर कियो। ता पीछे रासक्रीड़ा के विषे तिन सगरी गोपीन को अङ्गीकार कीयो, और अपने सत्य वचन को प्रतिपालन कीयो। रासक्रीड़ा करिकें सो रसानन्द की पात्र श्रीयमुनाजी हैं। तासूं श्रीयमुनाजी के विषें जलक्रीडा करी, तासूं श्रीयमुनाजी में दोषको निवारण करिवे को सामर्थ्य है भगवत्प्राप्ति विषयक प्रतिवन्धक विघ्न को हरण करिवे को सामर्थ्य श्रीकृष्ण भगवान ने श्रीयमुनाजी कों दियो। और पुष्टिमर्गीय अष्ट-विधिऐश्वर्य और सकल सिद्धि के हेतुपनो तथा शुद्धि सम्पादकपने सूं भगवद्भाव की वृद्धि करिवेपने सूं, और भगवत्सम्वन्ध प्रतिबन्धक निराकरण करिके

भगवत्स्वरूप के अनुभव की योग्यता को कारण त्रिभुवन को पवित्र करिवेपनो और भगवत्समान धर्मपनौ बिना यत्नको प्रभुसाथ सम्बन्ध को सम्पादन करिवे पनो और भगवान के प्रिय कलिके निवारण करिवे पनो भगवदीय के उत्कर्षता को करिवे पनो भगवत्प्रियत्व सम्पादन करिवेपनो शरीर के नवीनपने को साधकपनो प्राप्त होय है । और पुष्टिमार्गीय षड्विधऐश्वर्य सम्पन्न जैसें भगवान हैं। वैसें सर्व श्रीयमुनाजी में हैं, ऐसी सूचना करी है । शिव, ब्रह्मादिक देवन ने हूँ,आपको बाही रीत सों,पुष्टिमार्गीय छः प्रकार के जे ऐश्वर्य हैं । तिनसों युक्त श्रीयमुनाजी भी अनन्त गुणन सों, भूषित हैं । यह ऐश्वर्य को धर्म है, करिवेको और नहीं करिवे को अन्यथा करिवे को समर्थ है । शिव ब्रह्मादि करिके स्तुति करिवे योग्य हैं । ध्रुव और पराशर के मनवांछित फल दैवे बारी हैं । मेघ के समान है वर्ण जिनके निरन्तर प्रभुसान्निध्य करिके भक्ति के दैवे वारी हैं । सम्पूर्ण गोप तथा गोपीन सो आवृत है इन विशेषणन सों, ऐश्वर्यादि लक्षण दिखाये।

अब धर्मी स्वरूप को वर्णन करत हैं—

कृपा के सागर जो श्रीकृष्ण तिनसों मिली है जैसें श्रीयमुनाजी को सेवा के उपयोगी देहादिक संपादन

सों सेवकन को सृष्टि कर्तृत्व है, तैसे ही श्रीयमुनाजी के संग के पाछे श्रीगंगाजी को हू देहादि सम्पादन पूर्वक सेवा करायवे की सामर्थ्य है। यह उत्कर्ष श्रीयमुनाजी के संगहीसों भयो है। पहिलें पुराणादिकन मे दर्शनमात्र सों ब्रह्महत्या के हरिवे वारी या रूप को महात्म्य हतो; पहिलें जो महात्म्य कह्यो है। सो महात्म्य नहीं हतो। हे यमुने तुमकों प्रणाम है तिहारे जो चरित्र हैं सो अति अद्भुत हैं। तुम्हारे केवल जलपान करिवे सों कबहूँ यम की यातना नहीं होय है। तुम्हारे सेवन सों मनुष्य अति प्यारो होय जाय है, जैसे प्रभु को गोपी तृषा निवारण निमित्त भावना बिना भी जो जलपान करे तिनको हूँ, आप फल देवे वारी हो। यही तुम्हारो अद्भुत चरित्र है, कदाचित् कोई शंका करे कि यम की यातना तो भगवन्नाम स्मरण सो ही दूर होय है, तो यामें कौन अद्भुत चरित्र भयो ताको समाधान यह है कि कदाचित् नामादिक स्मरण मे अपराध होय जाय, तो मुख्य फलकी प्राप्ति नहीं होवे और यहाँ तो तृषा के निवारण के अर्थ ही जलपानमात्र सों मुख्य फल की प्राप्ति होय है। यह ही माहात्म्य विशेष है। और हे यमुने ! जो कोई मनुष्य तुम्हारे नमन स्मरण करें हैं तिनके सम्पूर्ण दुःख दूर होय

जाँय हैं । तथा निश्चय भगवान में प्रीति होय है। तासों सकल सिद्धिन की प्राप्ति होय है । स्वभाव को हू विजय होय है, यह श्रीआचार्य्यन की आज्ञा है या रीति सों भगवान को चौथी प्रिया श्रीयमुनाजी जानिवे योग्य हैं ।

ऐसे मुख्य स्वामिनी श्री राधाजू और चन्द्रावली तथा सहचरी के साथ और जिनमें श्रीराधाजी मुख्य हैं। तथा श्रीयमुनाजी प्रभृत्ति स्वामिनीजी के साथ और श्रुतिरूपा जो मुख्य गोपिका जे श्रुतिकुमारिका और श्रीयमुनाजी की सम्बधि ऐसी सहचरी के साथ रमण करत हैं सो स्वरूप के गुण कछू कहें हैं ।

अथ मूलरूप को वर्णन–

सद्धर्मके मूलस्वरूप और आनन्द के मूलरूप तथा मंगल के मूलरूप सर्व सौन्दर्य के मूलरूप श्रेष्ठ प्रेम के मूलरूप अखंडित सर्व प्रकार के सामर्थ्य के मूलरूप, आधार के आधार रूप और स्वाश्रय रूप, और अलौकिक लावण्य के समूहरूप सर्व प्रकारके सद्गुण के मूलरूप छः प्रकार के ऐश्वर्य करिके युक्त सुन्दर मनोहर और चातुर्य को मूलरूप और चतुर महा उदार तथा तेजोमय है । कृपा को समूह रूप और साकार के संग्रह रूप और श्रेष्ठ पुरुष रूप जिनको आकार है और

आनन्दमय जिनको विग्रह है शुद्धाद्वैतरूप सदा शुद्धरूप स्वभक्त को आनन्द की वृद्धि करिवे बारे आनन्द मय है श्रीहस्त जिनको और आनन्दात्मक है चरण जिनको और आनन्दमय है श्रेष्ठ श्रीमुख जिनको तथा जिनको सुन्दर उदर भी आनन्दात्मक ही है। और शोभायमान है अप्राकृत है, अति सुन्दर है ललित है, दिव्यरूप है, भक्तन के भावानुसाररस के प्रगटायवे में तत्पर नित्य-लीला के विनोदी सदा सर्वदा अखन्ड एकस्वरूप स्वच्छ रत्नन सों मंडित निर्दोष पूर्ण गुणरूप स्वेच्छा सों पूर्ण सुन्दर शोभा सों युक्त व्यक्तस्वरूप और अव्यक्तस्वरूप ईश्वर नियन्ता सर्व लोक के मनकों हरिवे बारे दिव्य रस के मन्दिर रूप अपने स्वरूप में प्रकाशवे बारे, अथवा स्वप्रकाशरूप वैसे ही सर्व को प्रकाश करिवे बारे साक्षात् परमानन्द स्वरूप श्रीयशोदाजी के उत्संग मे लालन पालन है। जिनके वैसे ही नन्द को आनन्द देवे बारे श्रीकृष्ण प्रभु पूर्वोक्त व्रजभक्तन के संग श्री-गोकुल के विषे अपनी रसात्मक लीला कों करत है।

अब यह श्रीगोकुल को वर्णन करें हैं-

गोपन को सुख देयबे बारो गऊन को प्रिय, पापन को नाश करिबे बारो साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र के चरण-कमल की रेणु सों पवित्र साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम के लीलाधाम है। संसार के दुःख को नाश करिवे बारो,

सुन्दर जे दैवीजीव तिनसों मनोहर सम्पूर्ण पीड़ान कों दूर करिबे वारो। गोपिन को मन रूपी जो कमल ताके प्रकाशक, सूर्य्य जो श्रीकृष्ण तिनके संचार सो सुन्दर नन्दनन्दन को जो संवास तासों अति प्रफुल्लित, भावात्मक जो भक्त तिनको अपने शरीर के आनन्द को देयवे बारो, पवित्र पृथ्वी को भूषण श्रीगोकुलेशजी को श्रेष्ठ प्रेम को स्थान, अपने करुणा पात्र पुष्टिमार्ग ही में एकनिष्ठा हैं। जिनकी ऐसे वैस्णव जामें बसे हैं जे गोकुल को सेवन, दर्शन स्पर्शन ते इष्ट को देयबे बारो, नित्य श्रीकृष्णजी की भक्ति रूपरत्न को देयवे बारो, जो जीव श्रीगोकुल में बास करें हैं, ते साक्षात् श्री-पूर्णपुरुषोत्तम की चरणकमल की सेवा में वसें हैं। ऐसो जो श्रीगोकुल तामें साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण केवल रस रूप बारी लीलान कों करें हैं। यासों बाललीलान के विषय में जे महात्म्यरहित रस के प्रकाश करिवे वारी लीला हैं, वे ही पुष्टिलीला समझनी चाहियें। चौक में घुटआन सों चलनो, दही की मथनी को पकरिबो, माखन को चुरायबो, गऊन को चरा-यवो, गोपन के बालकन में नाचनों, दही को दान माँगिवो, महलन में हिंडोरा झूलनों याही रीतिसों, अनेक प्रकार की पुष्टिलीला श्रीगोकुल में कीनी है।

याही रीति सों नाना प्रकार की क्षण क्षण में विलक्षण लीलान को विधान सब पर्वतन में श्रेष्ठ आछी आछी झरना बारी जो गुहा तिनसों युक्त रम्य हरि दासन में श्रेष्ठ जे श्री गिरिराज, तामें प्रथम कहि आये, ऐसे जे व्रजभक्त तिनके संग श्रीनन्दकुमार दही को माँगिवो इत्यादि, तथा दीपमालिका में व्रजभक्तन सों लेयवो देयवो बेचिवो तथा पुष्टियज्ञ को उत्सव भोजन, गोवर्द्धन को धारण करिवो, कुसुममंडप को रचनो इत्यादि लीला कीनी हैं, तिन लीलान को मनोहर स्थान रूप—

श्रीगिरिराज को वर्णन

श्रीगोवर्द्धन जो पर्वत है सो साक्षात् हरिदासन में श्रेष्ठ है, भक्तिमान है। श्रीकृष्णचन्द्र के चरणकमल के स्पर्श सूं रोमांचित है। तथा अपने जो कन्दमूल सरस मधुर जो फल चंचल जो नवीन पल्लव तथा सुगन्धि सों प्रिय कृष्ण के तुल्य, पृथ्वी में अति दुर्लभ श्रेष्ठन करिके पूजनीय मुक्ति फल को देयवे बारो ब्रह्महत्यादि पापन को नाश करिवे बारो, सम्पूर्ण कष्टन कों दूरकर्ता, धनधान्य भूमि सोभाग्य सर्वसम्पति को देयवे बारो, संसार को जो भय ताको नाशक ऐसे गिरिराज में भक्तिभाव सों युक्त जे वास करे हैं ते भगवान को अति प्यारे हैं। श्री गोवर्द्धन भक्तन कों दान नियम

तप व्रतादिकन कों कहा कार्य है, जे जीव तहाँ वास करे हैं ते अति पुण्यात्मा हैं तिनके दर्शन सों सम्पूर्ण पाप नाश होय जाँय हैं। जो प्रेमपूर्वक श्रीगिरिराज को दर्शन करें हैं वे ही सब धर्मन के कर्ता तथा सब पापन के नाश करिवे बारे हैं। जो मनुष्यन में श्रेष्ठ श्रीगिरिराज में भक्ति तथा बिनकी शिला कों स्पर्श करें है, ते धन्य हैं! और जो नेत्र श्रीगोवर्द्धन के दर्शन करें हैं, ते उत्तम हैं! और जो प्रातःकाल श्रीकृष्ण के अति प्रिय श्रीगिरिराज को दर्शन करें हैं, तिनकों फिर या लोक में जन्म नहीं होय है और जो आनन्द सूं नित्य श्रीहरिदास वर्य्य श्री गोवर्द्धन की प्रदक्षिणा करें है ते देवेन्द्र के वैभव कूं तुच्छ गिने हैं। वो भगवत् लोक मे बास करें हैं तथा उनकों हजार अश्वमेध यज्ञ को फल प्राप्त होय है। पापन को नाश करिवे बारो अति पावन दर्शन मात्र सो, ब्रह्महत्यादिक दोष हरन बारो है। याही सूं इनकों नित्यता तथा आनन्दमयत्व निश्चय सिद्ध है।। प्रकरणवश सों श्रीगोवर्द्धन को महात्म्य और भी कहें हैं। या समय में पुष्टिभक्ति श्रीगिरिराज ही हरिदासन में श्रेष्ठ हैं। तामें कारण और जे हरिदास हैं, तिनके मर्यादा मार्ग मिश्रित पनो है। यह तो शुद्ध पुष्टिभक्त हैं। श्रीकृष्ण के हू, श्रम के हरिवे बारे

स्वार्थ को लेश हू नहीं है उन्ही के सुखसूं सुख मानवे बारे हैं। और साधन रहित नीच जे पुलिन्दिनी तिन को अपने सम्बन्ध सों भगवान के चरण कमल को प्राप्त करिवे योग्य कीनी, याही सूं इनकी उत्कर्षता है। जो साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के स्वरूप ज्ञान को अनुभव करावत हैं। उद्वेग प्रभृति जे प्रतिवन्ध तिनकों दूर करें हैं, साक्षात् भगवान ने आप हो पूजन तथा, पुष्टि यज्ञ करिके वृष्टि के सात दिन पर्यन्त गोवर्द्धन को धारणकर अपने योग सों व्रजवासिन की क्षुधा पिपासा निवृत्ति पूर्वक अनिवर्चनीय सप्त देवऋषि पितृरूपादि जे रक्षा सों तिनकों पृथक् करिके स्वयं आपही ने रक्षा करी है।

श्रीगोवर्द्धन कूं धारण करि रहे हैं—ऐसो श्रीगिरिराज हैं, अब औरहू, श्रीगोवर्द्धन के महिमा को वर्णन करे हैं। हे मुनिसत्तम ! भगवत् सम्बन्धी गोवर्द्धन के आराधन को, जो पुण्य है, ताकों मैं कहूँ हूं। जिनके अन्वेषण मात्र सों, मनुष्य सगरे पापन सों छूट जाय है। यासों परे तीन हूँ लोकन में पुण्य नाही विद्यमान है। सम्पूर्ण कामनान को देयवे बारो जासूं परें कछु और कल्याण नाहीं है। सो मैं सत्य कहूँ हूँ—

पापीनहूँ को एक बारहू गिरि को पूजन मुक्ति

देयबे बारो है । भक्ति को देयबे बारो है । जा वैष्णव के गृह में एकहू बार जो गोवर्द्धन को पूजन होय ताके पितृ कोटि कल्प पर्यन्त परितृप्त होंय जाँय हैं । जा प्रकार सूं भगवान पुरुषोत्तम श्रीगोवर्द्धन के पूजन सों सन्तुष्ट होंय हैं । तैसे और बात सूं प्रसन्न नाहीं होंय है। यामें सन्देह नाहीं, तथा जो मनुष्य श्रीगिरिराज को पूजन करें हैं । तिनको तप दान तीर्थ विधि पूर्वक योगादिकन सों कहाकाम? विनकों हरिदास के श्रीगोवर्द्धन के पूजनमात्र सों ही सर्व पुन्य प्राप्त होंय जाँय हैं।

वस्त्र आभूषण सुगंध भोजन सामिग्री नाना प्रकार सों श्रीगिरिवर कों गन्ध पुष्प धूप दीप ताम्बूल फलादिकन सों यथा शक्ति पूजन आराधन करें हैं तथा ब्राह्मणन कूं भोजन करावे हैं, भेट करें हैं, परिक्रमा देय हैं, दक्षिणा देय हैं, ताको फल माहात्म्य में वर्णन नाहीं कर सकूं हूं या समय में तो यह सम्पूर्ण लक्षण केवल हरिदासवर्य्य में ही हैं । या काल के भगवदीय के सम्पूर्ण लक्षणन को अभाव है साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम ने स्वतः इनको महात्म्य प्रकाशित कियो है तथा अब गणना करिवे बारे मनुष्यन कूं, और बनावासियन की इच्छा प्रमाण रूप को ग्रहण करिवे बारो यह श्रीगिरिराज है । अवज्ञा करे ताकूं हनन करत हैं ।

अर्थात् अवज्ञा करिवे वारे हैं । काम रूपी स्वेच्छाचारी रूप मनुष्यन को और बनवासिन कूं ह हनें हैं । तासूं अपनेन जनन कूं गायन कूं सुखरूप ऐसे यह श्री गिरिराज हैं । ताकूं हमतो अपने तथा गोपन के कल्याण के लिये नमन करें हैं । यह सदा ही स्मरण पूजन करिवे योग्य हैं । और जो कोई अपनो कल्याण चाहे तो इनकूं नमन करे, ऐसे श्रीकृष्ण गोवर्द्धनधर ने श्री भागवत में आज्ञा करी है । ऐसे हरिदासवर्य को वर्णन करिके, अब श्रीवृन्दावन जो क्रीड़ास्थल है, ताको वर्णन करें हैं ।

अथ वृन्दावन वर्णन—

अति पवित्र और दव्य नाना प्रकार के ताल तमाल लवङ्ग शाल कदम्ब आम्र कपित्थ पीपल बट जामुन पनस पलाश के जे वृक्ष तिनके समूह सों युक्त मनोहर जे पुष्पन के गुच्छा तथा झरना तासों शोभित, पर्वतन के शिखरन सों शोभित है । पक्षी तथा झरना ताके शब्दन सों सन्तुष्ट जे सारस हंस कोकिला जिनके शब्दन सों शब्दित है, हरिणी गन्ध मृग बानर आकाश मार्ग में उड़न बारे जे और पक्षी तिनसों मन को हरिवे बारो, मुनि जनन के माननीय श्यामसुन्दर के यश को गान करिवे वारे भौंरान सों शोभायमान सुगन्धयुक्त जे वृक्ष तिनसों मन हरिवे बारो साक्षात् श्रीकृष्ण जाम

विराजमान रहे हैं। सर्व तीर्थन में तथा सम्पूर्ण बनन सों श्रेष्ठ दर्शन सों मनोभिलाषित फल देयवे बारो, तथा भक्तिपूर्वक वास करिवे बारेन को शीघ्र ही मनोबांछित सिद्धि करिवे बारो है।

वृक्ष वृक्ष में मुरली धारण करिवे बारे विराजे हैं। और पत्र पत्र में चतुर्भुज रूप निवास करें हैं। ऐसो वृन्दावन जामें स्नान बिना स्नान की कथा हू नहीं है। सदा पवन के रज ते परसन ते वृक्षन के परम पवित्र होय जांय हैं। श्रीकृष्ण की लीला को अनुभव देयवे बारो पुष्टि सृष्टिसों सुशोभित, भावात्मक जे साक्षात् पुष्टि पुरुषोत्तम तिनकों जो कृपादान को रस ताको धारण करिवे बारो नाना प्रकार के जे कुञ्ज तिन सों युक्त प्रेम को स्थान, गोपी जनन को आनन्द देयवे बारो ऐसो श्रीवृन्दावन परम रमणीय रासस्थल में, पूर्व में कहे जो ब्रजभक्त तिनकों जो आज्ञा कीनी हुती। ताको सत्य करिवे कूं साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र हू शरद् काल की सुभग मनोहर जो रात्रि ताकूं देख प्रभु भक्ति योग करायवे बारी अन्तरंग रूपा योगमाया के आश्रित रमण करिवे कूं मन करत भये। यह सर्व विस्तार श्रीभागवत में प्रसिद्ध है। वे जो वृन्दावनचन्द्र हैं, तिनने वेणुनाद करिके, श्रुति रूपा जे गोपिका कुमारिका

तिनको बुलाये तथा बिनके भाव की परीक्षा कर, लघु रास करिके अन्तर्धान होयकें, विरह को अनुभव कराय कें पाछे सों साक्षात् मन्मथ के मन्मथ रूपता रूपसों प्रकट होयकें, महारासोत्सव में उनहीं के संग विहार करत भये।

अब योगमाया को विशेष विवेचन करें हैं। उत्तर शृङ्गार रस रूप को और निरन्तर स्थायी भाव संज्ञक ऐसो श्रीकृष्ण के भावरूप अग्नि धारण करिवे बारी श्रीमत्स्वामिनीजी की सखी शक्ति श्रीअङ्ग सों प्रगटी तिनके सामर्थ्य के अधिकरणभूत योगमाया है। यासूं श्रीसुबोधिनी के विषै अन्तरंग भक्तत्व और सर्वरूप होयवे की सामर्थ्य ताको सम्पादन कीनो है। या कारण सूं योगमाया के संगही भगवान को आत्म योग है। जासूं शुद्ध ब्रह्म पुरुषोत्तम आपही साक्षात् जो कछु श्री-स्वामिनी जी करें हैं तैसे ही वा योगमाया के अभिप्राय को देखकें, आपकी इच्छा सों सर्वकार्य करें हैं। सो योगमाया भगवत् संग सुख सेवा परम अन्तरंग भक्त हैं। तासूं करिहे ताके अनन्तर जितनी गोपिका ही तितने ही रूप धारण करिके भगवान् अपनी लीला सों रमण करत भये। या रीति सूं भगवत् संग सो प्राप्त है रसानन्द जिनको, ऐसी जो गोपिका ते भगवत्

की महाउदार लीलान कों प्रेम करिके गावत भईं। रासलीला के अनुभव कूं प्राप्त होत भईं, सोई विद्वन्मण्डनान्तर्गत नित्य लीलावाद में बाल स्वरूप सों लेयके जो जो लीला करी हैं। जैसे जेंसे स्वरूप सूं तिन सबन कों सर्वदा नित्यत्व श्रीप्रभुचरण ने प्रतिपादन कियो है। या रीति सूं, नाना प्रकार के जो बाल पौगण्ड किशोर चरित्रन में उनके गुण कर्म के अनुरूप लीलान को तथा स्वरूपन को सम्पादन कियो है। ताको कहें हैं।

श्रीबालकृष्ण, श्रीनवनीतप्रिय, श्रीनटवर, श्रीनाथ, श्रीगोवर्द्धनधरण, श्रीमथुरेश, श्रीगोकुलचंद्रमा, श्रीद्वारिकेश, श्रीमदनमोहन, श्रीवृन्दावनचन्द्र, श्रीकृष्ण, श्रीगोविन्द, श्रीगोपाल प्रभृति भगवत् नाम तथा स्वरूप सब नित्य विलास करें हैं। तथा बाल लीला सों लैकें, रासलीला पर्य्यन्त जे लीला तथा तिनके जे भक्त तिनकों हू आनन्द मयत्व नित्यत्व है। और याही रीति सूं श्रीगोकुल गोवर्द्धन वृन्दावन में श्रीकृष्ण परत्माने बहुत लीला करी हीं, तथा अनिष्ट निवारक जो लीला ब्रज में भई सोतो अंश कला व्यूहन द्वारा करवाईं, सो नामरत्न विवृति में कह्यो है। पुष्टिपुरुषोत्तम भगवान अनिष्ठ निवारण तो संकर्षण द्वारा करावें हैं आप तो भक्तन के मनोरथ कों सम्पादन करे हैं। शिक्षापत्र में हू, कह्यो

है। अंशन के जे कार्य्यन कों मूल रूप में जे लगावें हैं, ते मूढ़ता को प्राप्त होय हैं। पृथ्वी को भार हरण तो कला रूप ने ही कियो, और भगवत् पीठिका में ही कह्यो है। पूतना वधादिक जे लीला हैं,ते संकर्षण ने ही कीन्हीं हैं। और कौन बिना उनके स्पर्श मात्र सो पापन को नाश करता है। लीला भेद में स्वरूप भेद नियामक है। यह श्रीसुबोधिनीजी में कह्यो है। तथा यमुलार्जुन के भंग में हू संकर्षण तथा धर्म प्रतिपालन में मर्यादा में अनिरुद्ध बिन दोनोंन के देवता प्रमाण में प्रद्युम्न मोक्ष देयवे में वासुदेव या प्रकार सूं जो जो चरित्र अनिष्ट निवारक तथा माहात्म्य सम्पादक है। बे सब चारों व्यूहन को कार्य जाननों।

मर्यादा रहित परम आनन्द रूप बाललीलादि भेद, सो केवल आपही ने व्रज में कीनी हैं। तथा व्रज मे स्थित होयकें नित्य रासलीलान को करें हैं। तथा रासलीला क अनन्तर ग्यारहवें वर्ष पीछे मथुरा सूं अक्रूर जी आये तिनके संग पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण बलदेवजी के सहित मथुरा जी पधारे, तथा शिक्षापत्र मेंहूं कह्यो है, सम्पूर्ण धर्म विशिष्ठ मर्यादा सहित पुर में विराजिकें वहाँ हूँ रूपभेद करिके क्रीड़ा करे है। द्वारिका में हूँ मर्यादा विशिष्ट राजलीला कीनी है

सो भागवत उत्तरार्द्ध में प्रसिद्ध सो तिन लीलानं को तथा तिन स्वरूपन कों नित्यत्व विद्वन्मंडन में निरूपित्त कियो है। चक्रवर्त्ती टीका में हूँ, कह्यो है। गोपेन्द्र जो नन्दरायजी तिनके पुत्र वृन्दावन कों परित्याग करिके हैं तासू सब पदार्थन को नित्यत्व अन्यत्र नहीं पधारे अखँडत्व निश्चय है—

पुष्टिमार्गीय आचार्य गुरु के बिना पूर्व प्रतिपादन कियो जो स्वरूप ताको ज्ञान कैसे होय सकै है। तामें प्रमाण आचार्य्यवान् जो पुरुष है सोही साक्षात् पूर्ण पुष्टि पुरुषोत्तम कों जान सके हैं,ताके निमित्त श्रीआचार्यचरणन को स्वरूप निरूपण करें हैं।

अथ आचार्य स्वरूप को वर्णन—

प्रथम सारस्वत कल्प में शुद्ध पुष्टिभक्ति मार्गरूपी कमल ब्रज सरोवर में प्रादुर्भाव भयो, परन्तु वाको प्रकाशक जो आचार्यरूपी, सूर्य है तिनकी प्राप्ति बिना मार्गरूपी, कमल खिल्यो नहीं अतएव याही ते पुष्टिमार्ग के प्रफुल्लित करिवे कूँ, भ्रमररूपी जे निस्साधन भक्त हैं। तिनकूं पराग रसदान देवेकूं श्रीकृष्ण ने स्वमुखारविन्दाग्नि स्वरूप भक्तिमार्ग रूपी कमल के प्रकाशक सूर्य श्रीवल्लभाचार्यजी कूं अपनी आज्ञा देयके प्रगट करत भये क्यों जो या संसार में मनुष्यन कों धर्म अर्थ

काम मोक्ष यह चार अर्थ हैं। तामें मोक्ष चौथो अर्थ है, सो अनेक जन्मन की सिद्धि करिकें प्राप्त होय है। ताहू में अक्षर ब्रह्म को प्राप्ति रूपा मुक्ति तो हजारन में कोई बिरले जन की होय है। तो निस्साधन जीवन को जन्म तो वृथा हो भयो, तिनके उध्धार करिवे के लिये, श्रीकृष्णजी अपने मुखकूं अपनी वाणी करिकें प्रगट होयवे की आज्ञा देत भये, सो प्रकार वल्लभाष्टक से कह्यो है। रासलीला रूपी अमृत समुद्र तिनको भार ताके आनन्द को समूह ताके मध्य में निरन्तर बिराजिवे बारे, ऐसे जो श्रीवृन्दावनचन्द्र तिनके स्वरूप को जो प्रभाव असाधारण लीला करिवे में है। मन जिनको तिनको आज्ञा करिके, अति करुणावान् अग्नि स्वरूप श्रीआचार्यजी या भूतलपै श्रेष्ठ मनुष्य की आकृति करिके प्रगट भये हैं।

जो श्रीवल्लभाचार्यजी या पृथ्वी पै प्रगट न होते तो भूतनाथ जो महादेवजी हैं। तिनने कही जो अंधकार रूप असत् मार्ग ताके मोह करिके, दैवी जीव भी वेदमार्ग में चलिवे में अन्ध तुल्य होय जाते, और मनुष्यन कूं व्रजपति जो श्रीकृष्णचन्द्र हैं। तिनकी हु साक्षात् प्राप्ति न होती। तब ये निःसाधन दैवी जीवन को, जन्म निज फल करिकें रहित वृथाही होय जातो

और अज्ञान है,आदि में जिनके ऐसे जे काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्य्यादिक भगवन्मार्ग के जायवे में यह अंधकाररूपी प्रतिबन्ध हैं, तिनके नाश करिवे में चतुर याते अग्नि स्वरूप वर्णन किये हैं। परन्तु यथार्थ जो स्वरूप विचारिकें देखें हैं, तो साक्षात् भावात्मक श्रीकृष्णही श्रीआचार्यजी स्वरूप करिकें प्रगट भये, याही सों संपूर्ण बुद्धिवान जन श्रीआचार्यजी कूं साक्षात् श्रीगोकुलेश जानिकें ही भजन करे हैं। और सप्तश्लोकी में भी कह्यो है श्रीमद्वल्लभाचार्यजी के नाम के समान कोई दूसरो न तो भयो , और न कोई आगें होयवे वारो है। और प्रथम तो या जगत में पंडिताई थोड़ी है। और जो थोड़ी सो है भी तो वेद में गति नहीं, कदाचित् वामें गतिहू भई तो क्रिया शुद्ध नहीं, कदाचित् कोई में क्रिया शुद्धि भी भई तो हरिके मार्गमें परिचय नहीं, कदाचित् कोऊ को परिचय भी भयो तो साक्षात् व्रजपति जो श्रीकृष्ण हैं तिनमें प्रीति नहीं, ये सबरे गुरणन करिकें शोभित तो श्रीमहाप्रभुजी ही हैं।

यह श्रुति में हू कह्यो है सो अलौकिक अग्नि वैश्वानर श्रीआचार्य्यजी पुरुषाकार हैं। और पुरुषोत्तम के मुख में स्थिति हैं, और श्रुति रहस्य में हू कह्यो है। परब्रह्म ने ब्राह्मण रूप धारण कियो है, तहाँ शंका

होय है कि यहां श्रीवल्लभाचार्यजी को नाम तो स्पष्ट कह्यो नहीं है, यह श्रुति विनपै कैसें जानी जाय ताको समाधान या श्रुति में सवही धर्म श्रीवल्लभाचार्यजी के ही कहे हैं। ताते धर्म स्वरूप श्रीचार्य्यजी में ही अर्थ निश्चय होंय हैं, क्यों जो औरहू धर्म वर्णन करें हैं। कि पृथ्वी के बिषे दैवी जीवन के भवरोग निवारण के लिये, औषधी रूप धारण कियो है। सौहू वचन द्वारा उद्धार कियो वाणी के पति हैं तातें बड़े विष्णु साक्षात् पुरुषोत्तम स्वरूप हैं,या रीति सों निस्साधन दैवी जीवन को उद्धार श्रीमहाप्रभुजी ने कियो। और तिनमें सू भी रहे, जो निःसाधन दैवी जीव तिनके उद्धारार्थ श्री-आचार्यजी ने श्री गुसाँईजी, श्री विट्ठलनाथजी को, प्राकट्य कीयो। सो केवल पृथ्वी पै शुद्ध पुष्टिभक्ति के प्रचार के अर्थ अन्वय पुत्र प्रगट किये। ता स्वरूप में अपुनों सम्पूर्ण माहात्म्य लीलात्मक स्वरूपात्मक अनत अनिवर्चनीय स्थापन कीयो, ये सर्वोत्तमजी की विवृति मे कह्यो है। और शिक्षापत्र में हू,कह्यो है। श्रीमदा-चार्यजी तथा श्रीविठ्लेश्वर तथा इनकी निजलीला सामग्री ताके समान और कोई भी पदार्थ नहीं है। याही तें अपने निज श्रीआचार्यजी में तथा इनके प्रिय पुत्र श्रीगुसांईजी में मन निरन्तर स्थापन करनो योग्य

है। इन दोनोन के समानता की बुद्धि अन्यनन में सर्वथा कबहु नहीं करनी, और नामरत्न में हू कह्यो है। सुखसेव्य साक्षात् ब्रजेश्वर श्रीकृष्ण स्वरूप हैं। और ब्रह्मांड पुराण में हू कह्यो है। कृष्णअवतार पूर्ण होयगो, बुद्धावतार अंश होयगो। और श्रीविठ्ठल परमानन्दावतार होयगो, सर्व धर्म करिके, रहित जब घोर कलियुग प्राप्त होयगो तब द्विजन के आचार में रत और निर्मल ऐसो जो श्रीवल्लभाचार्यजी को गृह तामें मैं जो हूँ सो जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् परमानन्द स्वरूप अवतार लैके सर्व सूं परे जो मनोहर रूप है। ताकों भक्त जनन कूं दिखाऊँगो। इत्यादिक भगवान के वाक्यन ते श्रीविठ्ठलनाथजी कूं सम्पूर्ण पुष्टिमार्गीय साक्षात् श्रीगोकुलेशजी जानिकें ताको भजन करे हैं। और यह पुष्टिमार्ग के उपदेश कर्ता मुख्य गुरु आचार्य हैं। याते भगवत् स्वरूप ही जानने, तामें श्रीभागवत को प्रमाण एकादशस्कंध में है, आचार्य कूं मेरोई स्वरूप जानो, कोई कालान्तर में भी अपमान नहीं करनों। क्योंकि सर्व देवमय गुरु हैं। और जाकी श्रीकृष्ण में पराभक्ति है, तैसीही परा अनन्यभक्ति पुष्टिभक्ति मार्गीय ज्ञान के दाता श्रीविठ्ठलेश गुरुन में हैं। ताकूँ ही यथार्थ अर्थ प्रकाश करें हैं। अब अगाड़ी हू सात पुत्र प्रगट करिके

गुरु परम्परा करिके भूमि में पुष्टिभक्ति के प्रचार करिवे के लिये संतति को विस्तार कियो। सो प्रकार कहें हैं। ताको प्रमाण बृह्मांडपुराण में कह्यो है! मेरे ही तनुज निश्चय होंयगे, ते सब मेरे ई धर्मन के कर्ता वक्ता होंयगे, कोई कोई विशेष ज्ञाता होंयगे, मेरी सामर्थ्य करिकें युक्त होंयगे, याते श्रीगुसाँईजी के पुत्र सर्व धर्म के उपदेशक गुरु हैं।

याही ते सन्मार्ग के रक्षक कलि के धर्मन के नाश-कर्ता सत्संग ज्ञान के हेतु शांतस्वरूप भक्त के उत्कर्ष के बोधक, संसार के दुःख मोचक स्वमार्गीय ग्रन्थन के बोधक सदाचारवत बुद्धि व्यामोह हर्ता, ज्ञान प्रदीप अज्ञानादिक अन्धकार के नाशक स्वपितृ पितामह के विषय भाव वर्द्धक स्वमार्गीय सेव्य स्वरूप सेवाग्रह में तत्पर हैं, तिनमें प्रथम सुत श्रीगिरधरजी हैं, ते नर-भूषण हैं मायावाद निराकर्ता हैं। महापंडित वेदशास्त्र के वक्तान के शिरोमणि धुरन्धर हैं। द्वितीय सुत श्री-गोविन्दराय ते सदा आनन्दमय हैं, सर्व धर्मन के धाम है। अपने भक्तन के विश्राम को स्थान हैं, व्याकरण में निपुण हैं। और तीसरे सुत श्रीबालकृष्णजी शास्त्र के तत्त्व के ज्ञाता हैं। वात्सल्य रस में निमग्न हैं, छबियुक्त हैं, भागवत कथा में प्रवीण हैं। अब चतुर्थ

सुत श्रीगोकुल के अनन्यस्वामि तिनको प्राकट्य ताको प्रमाण प्रथम लिख्यो है ।

अथ श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी को प्रागट्य

ब्रह्मांड पुराण को भगवद् वाक्य है। मेरेई तनुज निश्चय होंयगे कोई कोई विशेषज्ञ मेरी सामर्थ्य युक्त होयंगे किंचित् या शब्द करिके विशेषज्ञत्व स्वपूर्ण सामर्थ्यवत्व इनमें ही कह्यो है और पद्मपुराण के उत्तर-खंड के श्लोक कल्लोल ग्रन्थ में है। उनको हू ये ही अभिप्राय है, सो लिखें हैं । लक्ष्मणजी सूं श्रीवल्लभ होंयगे और वल्लभ सूं श्रीविट्ठल होंयगे सो साक्षत् जगदीश्वर होंयगे और तिनसूं श्रीगोकुलेश परपुरुषोत्तम होंयगे और अवतारन तें हूं अधिक कृपा के समुद्र भक्तवत्सल सकल गुणसागर सम्पूर्ण धरणी कूं, पवित्र करेंगे व्रजबन में विलास करेंगे। निवेदन के व्याज करिके अपने अनन्य भक्तन को उद्धार करेंगे। जैसे कल्पवृक्ष के मूल मध्य फल तैसे ही ये व्रजनाथ कलियुग में होंयगे इन वचनन कोही पोषक भाव श्रीवल्लभाख्यान मैं कह्यो है "ताततणो प्रतिबिंब" तात शब्द करिकें श्रीविठ्ठल तिनको प्रतिबिंब सो साक्षात् ऊनको ही स्वरूप है। अति गुणनिधि हैं अति शब्द अभेदानंद असाधारण अदेयदान दातृत्व महोदारता चातुर्य सौंदर्य

रम कृपालुतादिक अनन्तगुण तिनको निधि सो समुद्र है। जैसे समुद्र में जल की गम्भीरता को प्रमाण नहीं, तैसेई पहले कहे जे गुण तिनकी हू या स्वरूप में थाह नही है। अथवा गुणन की निधि, सो ज्ञान उत्पत्ति के मूलस्थान या विशेषण सूं भी, साक्षात् पुरुषोत्तमत्व सूचन कियो। और प्रेम सूं सो प्रेमलक्षणा भक्ति के उत्पन्नकर्ता सकल कुटुम्ब के शोभारूप हैं। और श्री-गुसांईजी के दोहिता श्रीकृष्णरामलाला तिनने रुचिराष्टक में वर्णन कियो है। भूमि के विषे छः धर्मन कूं जुदे जुदे प्रगट करत भये। श्रीविट्ठलजी ही हैं, सो चतुर्थ सुत गोकुल के स्वरूप करिके स्वयं आप ही होत भये, सर्व गुणन करिके परिपूर्ण रूप जे श्रीवल्लभ प्रभु चतुर्थ सुत तिनकों मैं निरन्तर भजन करूं हूँ। और नाममाला में हू, कृष्णरायलाला भानेज ने कह्यो है। श्रीवल्लभाचार्यजी को स्वरूप श्रीविट्ठलीनन्दन है। सदानन्द रूप हैं। अपने पितामह जो श्रीआचार्यजी तिनके स्वरूप को ही जतायवे वारो धारण कियो है। नाम जिनने और स्वपिता को ही ये स्वरूप है। ये जतायवे कूं प्रसिद्ध कियो है। छः गुण—१. ऐश्वर्य २. वीर्य ३. यश ४. श्री ५. ज्ञान ६. वैराग्य, जिनने जो मनुष्य कार्य नहीं कर सके ऐसी है कृति जिनकी और

श्रीकृष्ण ही वल्लभरूप धरिकें प्रगटे हैं। और हरिराय-जीने हू अष्टक में कह्यो है। कृपा के परवश होयके अपने स्वकीय जनन को अपुने ही स्वतन्त्र बल करिके उद्धार करिवे कूं या भूतल पै श्रीविठ्ठलेश के गृह में आविर्भाव भये हैं।

प्रगट होयकें श्रीभागवत के अर्थ जामें परम तत्व-रूप है। ऐसो श्रीसुबोधिनीजी की कथा रूपी जो अमृत बचन तिनकी वृष्टि करिके सींचे हैं। भक्त अनन्य जिनने और आपके तात जो गुसाँईजी तिनकी हो एक आज्ञा मे परायण ताके आशय के जानिवे बारेन में हू ये श्रेष्ठ है। उत्तम हैं, और परम आनन्द के दैवे बारे हैं, और सन्तन के कंठ में अपने और निजफल के प्राप्ति की है, इच्छा जिनके ऐसे जो सन्त तिनकूं सदा सेवनीय है महायत्न करिके रक्षाकर धारण कराई है, तुलसी की माला जिनने और श्रीगुसाँईजी ने प्रगट कीयो जो आचार ताको ही सदा प्रचार करिके विशेष ऐसे बढ़ायो है। पुष्टिमार्गीय अनन्यधर्म जिनने सो श्रीगोकुल के पति है,याते ही सर्व साधनकूं,निश्चयसूं ही निष्फल जानिके जन अन्य को आश्रय त्यागिके प्यारे प्रभु को नित्य भजन करो, तिनके नामन को जप करो, स्वरूप की सुन्दरताको मनमें चितवन करो, तिनके चरणारविन्द

की अभिलाष राखे तें सर्व पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त स्वतः आभास बिना निश्चय ही प्राप्त होयगो, ऐसे लक्षण युक्त चतुर्थ सुत श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी रक्षक हैं।

अब श्रीविट्ठलनाथजी के पञ्चम पुत्र श्रीरघुनाथजी श्रीगोकुलचन्द्रमाजी की सेवा शृङ्गार में निपुण पितृचरण की भक्ति के प्रचारक पुराण उपपुराण क वक्ता ईश्वर स्वरूप हैं। और छठ्ठे पुत्र श्रीरघुनाथजी ज्ञानस्वरूप हैं। भवरोग के निवारक वैद्य विद्या में धन्वतरिते हू अधिक निपुण हैं। भक्ति के उपदेशक है। और सातमे सुत श्रीघनश्यामजी पुष्टिलीला में मग्न है, स्वभक्तन के पोषक हैं, श्रीसदनमोहनजी के विरह में है, विक्षिप्त मन जिनके अब इनके पुत्र जो श्रीगोपाललालजी, श्रीविठ्ठलरायजी, श्रीकल्याणरायजी, श्रीदेवकीनन्दनजी, श्रीजयदेवजी. श्रीलक्ष्मीनृसिहजी, श्रीब्रजनाथजी, श्रीगोपेश्वरजी प्रभृति, और पौत्र जे श्रीगोवर्द्धनेशजी, श्रीहरिरायजी, श्रीपुरुषोत्तमजी, श्रीद्वारिकेशादिक वंशज बालक बहुधा करिके तो सर्व विद्वान है। और निजाचार्यजी के ही, चरणन में परायण अनन्य भजन करिकें ही सन्तुष्ट और काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्यादिक करिके विशेष वर्जित, लौकिकतें निरपेक्ष सर्व प्राणीमात्र के हितकर्ता, श्री-

कृष्ण की सेवा कथा में परमादरयुक्त श्रीभागवत के तत्त्व के, जानिवे बारे होत भये जो विशेष ऐसे प्रसिद्ध न होंय तो जगत में भक्ति को प्रचार कैसे होय। ता भक्ति के प्रचार के लिये और आसुरभाव में मिश्रित भये जे साधारण दैवीजीव तिनके चित्त विशुद्ध करिवे कू पुत्र पौत्र प्रपौत्रादिक वंश में भये जे सत्पुरुष है तिनकू नाम दैवे को तथा निवेदन करायवे को अधिकार श्रीमहाप्रभुजी श्रीगुसाँईजी ने अपुने वंशमें आरोपण कीयो है ताहीते सर्व जीवन को उद्धार कल्याण निश्चय ही होय है। अब ऐसे या प्रकार सूं समझ के दैवीजीवन कूं कहा कर्तव्य है ? सो कहें है। प्रथम भक्तिमार्ग के द्वारभूत वल्लभकुल में जे सत्पुरुष तिनकूं आगे राखिके भगवान श्री गोपीजन वल्लभ के सन्निधान में स्थित होयके तुलसीदल हाथ में लैकें सत्पुरुषन के मुख सूं पुष्टि महामंत्र कूं श्रवण करिके श्रीमदाचार्यचरण द्वारा व्यूहरहित् साक्षात् श्रीकृष्ण-गोवर्द्धनधरण गोपीजनवल्लभ में देहादिक आत्मा समर्पण करे याही को नाम आत्मनिवेदन है । या रीतसूं निवेदन करे पोछे या जीव कूं भगवदीयपनो भये. ताकी रक्षा करिवे कूं तथा भवरोग दूर करिवे कूं सदा सत्सङ्ग रूपी औषध अवश्य करनो सो कैसे संतन

को संग करनो सो कहें हैं । जिनकी श्रीकृष्ण में तो प्रीति होय नित्य और अन्य जीवन की प्रीति श्रीकृष्ण मे करायवे अन्य प्रयोजन धनादिक में निरपेक्ष सात्विकी वृत्ति ऐसे साधु पुरुषनको जो संग है सोई सत्संग है । और जो जन श्रीआचार्यजी के वचनन ते विरुद्ध कहें वाकू संसार को प्रेरक जानिकें वाके दुःसंग को त्यागि करनो, ऐसो निश्चय करिके ही सङ्ग करे, चाहे अपने होंय चाहें पराये होय चाहे महत्कुल होंय, निश्चय ताको सङ्ग सर्वथा न करे। जो बाधक होय, श्रीआचार्यजी ते विमुख होय उनके समान और कू जाने है, ऐसे विरुद्ध जन हैं। उनकू अवैष्णव जाननो और अज्ञानादिक जे काम क्रोध लोभ मोह मद मात्स-र्य्यादिक की निवृत्ति के लीये, और पुष्टिमार्गीय ज्ञान की प्राप्ति के लीये, गुरुन को वचन सन्निधान में स्थित होयकें, शुद्ध अन्तःकरण ते सुनेगो वचन गुरुन के कैसे हो, सो शिक्षापत्र में कह्यो है । गुरुननें कहे जो वाक्य हैं, ते स्वतः अपने आप नवीन कल्पना करिके न कहे किन्तु प्रसिद्ध होय और कदाचित दो चार ठिकाने प्रसिद्ध हू होंय तो हू कहा भयो, परन्तु मूलक्रम परंपरा ग्रन्थन सूं मिलते होंय । ऐसे वचन कूं निश्चय हृदय मे धरे, ऐसे सत्पूरुष गुरुन तें पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त

समझे। और असत् पुरुषन कों संग तो मन करिकें हूँ न करे, महाबलवान बाधक दुःसङ्ग है स्वमार्ग में ही एक जिनकी लगन है तिनको सङ्ग करे, तिनके लक्षण ये हैं, जो काया मन वाणी करिके एक श्रीआचार्यजी मे ही परायण होय ऐसे संग के प्रभाव सूँ निवेदन कर स्वरूप समझे, सेवा में प्रतिबन्धक सर्व दोषन की निवृत्ति याही सूं होय है। ऐसे ज्ञान भये पीछे पूर्वोक्त पुरुषोत्तम की सेवा करनी अवश्य है तहाँ स्वरूप ज्ञान बिना मुख्य फल नहीं मिले है। अन्यथा भाव करिवे मे याके सर्व अर्थ व्यभिचार कूं प्राप्त होंय हैं। यातें या ग्रन्थ में कह्यो जो श्री कृष्ण सेव्यस्वरूप ऐसो स्वरूप अपने वर में जानिके श्रीकृष्ण सेवा सदा करे कृष्ण सूं परे और कोई भी निर्दोष पदार्थ नही है। ऐसी आज्ञा श्रीआचार्यजी ने करी है। तथा तैसोई आचरण करि-के श्रीगोवर्द्धननाथादिक सेव्यरूपन की सेवा करी है तहा पहले श्रीगोवर्द्धननाथजी स्वइच्छा तें प्रगट भये सो प्रकार कहें हैं। श्रीमदाचार्यजी सूं अपुनी सेवा करा-यवें कूं श्रीगिरिराज की कन्दरा में सूं रसरूप कोटि कन्दर्पलावण्य युक्त श्री गोवर्द्धननाथ स्वयं आपही स्व-इच्छा तें प्रकट होत भये सो साक्षात् नंदनंदन वृन्दावन-चन्द्र जगत् उद्धारकर्त्ता वल्लभकुल के अधिपति परम

इष्टदेव मूलस्वरूप नित्य अखंड हैं। सारस्वतकल्प में साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम हू दूसरो स्वरूप शैलमय धारण कर श्रीगिरिराज में प्रकट होय अन्नकूट यज्ञ सम्बन्धी सर्व सामिग्री अरोगत भये ताको प्रमाण श्रीभागवत मे गोपन कूं विश्वास के लीये श्रीकृष्ण अन्य रूप बड़ो धारण कर बोले के शैल में हूं ऐसे कहते सर्व सामिग्री अरोगत भये इन वाक्यन ते शैलरूप पुष्टि पूर्णपुरुषोत्तम को भावात्मकपनो दिखायो है।

श्रीगोवर्द्धनधरण तथा वे लीला तथा या लीला के सम्बन्धी भक्तन कूं नित्यत्व विद्वन्मंडन में कह्यो है। और श्रीमदाचार्य तथा श्रीप्रभुचरण के, घर में विराजे जे सेव्य स्वरूप तथा तिनके सेवक चौराशी दौसो बावन वैष्णवन आदि दैके जे भक्त तिनके घर में विराजे—आपके सेव्य स्वरूप तिनको प्रकार कहें हैं।

सेव्य स्वरूप तथा सेवा भावना

श्रीगोकुल ग्राम में स्थित श्रीनवनीतप्रिय,श्रीगोकुलेश,श्रीमथुरेश,श्रीविट्ठलेश,श्रीद्वारिकेस,श्रीगोकुलचन्द्रमा श्रीबालकृष्ण श्रीमदनमोहन ते अष्टस्वरूप साक्षात् नंदनन्दन यशोदोत्संगलालित परमतत्व हैं। मूल में तो पूर्ण पुरुषोत्त एक ही हैं। भक्तन के,अनुग्रह करिवे कूं, अष्टरूप धारण करें हैं। याको प्रमाण श्रीसुबोधिनीजी

में है, षोडश गोपिकान के मध्य में श्रीकृष्ण अष्टस्वरूप धारण करें हैं, या भाव करिके ही भावना करिके सेवा स्मरणादिक करे हैं। तथा आपने अपने अनेक सेवकन कूँ श्रीनवनीत प्रिय, श्रीबालकृष्ण, श्रीमदनमोहन, श्री-ललितत्रिभंगीलाल, श्रीमुकुन्दराय, श्रीवृन्दावनचन्द्र, श्रीकृष्ण, श्रीश्याममनोहर, श्रीमोहन, श्रीनागर, श्री-दामोदर, श्रीद्वारिकेश, श्रीमथुरेश, श्रीव्रजेश्वरादि नाम बाल पौगंड किशोर, अवस्थादि विविध आकृति भगवत् सेव्य स्वरूप अपने अनेक सेवकन कूं सेवा के लीये देत भये। ते सर्व स्वरूप साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम नन्दनन्दन यशोदोत्संगलालित परम तत्व हैं, अब यहां एक स्वरूप में सूं अनेक स्वरूप प्रगटे ताको प्रमाण भागवत में है जितनी गोपिका रासमंडल में हीं तितने ही स्वरूप भगवान ने धारण करे, ते सर्व एकएक भक्तन के भावात्मक रूप हैं। ऐसे भी स्वरूप स्थित करिके तिनकी सेवा प्रथम श्रीआचार्यजी, श्रीगुसाँईजी, आप करिके अपुने सेवकन कूं देत भये। पहलें तो ऐसे अनेक स्वरूप रहे परन्तु अब या काल में दोनों स्वरूपन के सेव्य स्वरूप १५० डेड़सौ के अनुमान या भूतल पें विराजे हैं जिनके घर में ये सेव्य स्वरूप विराजे हैं। तिन के महाभाग्य हैं। परन्तु अब ये सेव्य स्वरूप सब जीवन

कूं प्राप्त नहीं है। और सेवामार्ग में सेवा करनी अवश्य है, सेवा बिना मनुष्यन के जन्म व्यर्थ हैं। ताके लिये श्रीगुसाँईजी कृत पुरुषोत्तम प्रतिष्ठा प्रकार ग्रन्थ संग्रह है और ताही के अनुसार श्रीहरिरायजी ने श्लोक रचना करिके ग्रन्थ प्रसिद्ध कीयो है। ताही प्रकार करिके बाल पौगंड किशोराकृति श्रीकृष्ण मूर्ति कूं पचामृत स्नान भये पीछे, भावना करिके सो स्वरूप भक्तिमार्गीय जीवन कूं सेवा करिवे योग्य है। श्रीपुरुषोत्तम प्रतिष्ठा भये पीछे विन मूर्तिन कूं पुरुषोत्तमात्मकता है। तिनकी जो जो प्रकार सों सेवा करें सो सो साक्षात् भगवान कों ही कियों सिद्ध होय है। परंतु आविर्भाव अनुभव सेवा के करिवे वारेन के भाव के अनुसार ही होय है। तासूं भाव ही मुख्य कारण है, जो जैसे भाव करिके सेवा करे ताकूं तैसी ही रीत को अनुभव होय है। तासूं सातघरन की सृष्टि के वैष्णवन कूं जा जा घर के जे मुख्य सेव्य स्वरूप १. श्रीमथुरेशजी २. श्रीविट्ठलेशजी ३. श्रीद्वारिकेशजी ४. श्रीगोकुलेश जी, ५. श्रीगोकुलचन्द्रमाजी, ६. श्रीबालकृष्णजी ७. श्रीमदनमोहनजी। ये सात स्वरूपन में सूं जा जा घरके जो जो वैष्णव हैं। तिनकूं अपुने अपुने घरके सेव्य स्वरूपन में, सातस्वरूपन की भावना करनी योग्य है।

ताही सूं सेवाफल ग्रन्थ में कह्यो जो मुख्यफल है। सो प्राप्त होय, नहीं तो,जो जैसे भगवान कूं भजे ताकूं तैसी ही रीत सूं ही भगवान् माने हैं। जैसी जाकी भावना है, ताकूं तैसो ही फल सिद्ध होय है। मर्यादा रूपान्तर आकृति में साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम जो सेव्य स्वरूप तिनकी भावना करिकें मर्यादारूप की सेवा करनी सो पुष्टिमार्ग रीति सों विरुद्ध है। साक्षात् मुख्य फल की प्राप्ति नहीं सो यमुनाष्टक की टिप्पणी में कह्यो है असाधारण धर्म तो धर्मिस्वरूप में ही है। सो मूल धर्मिस्वरूप के जो उपासक हैं। तिनकूं मर्यादारूपान्तर मे असाधारण धर्मन की भावना नहीं करनी चाहिये अन्यथा भावना करिवे में दोष है। जो स्वरूप तो है, मर्यादापुरुषोत्तम और उनमें पुष्टिपुरुषोत्तम के स्वरूप लीला की भावना करनी रसाभास को हेतु है। और अनुचित भी है, क्यों जो स्वरूप तो है, और रीति को और वाको समझे और रीति सों, वाके अर्थ व्यभिचार कूं प्राप्त होंय हैं। मुख्यफल प्राप्तिनहीं यद्यपि सीतापति श्रीरामचन्द्रजी मर्यादा पुरुषोत्तम हूं हैं। तोहू रसात्मक जो श्रीगोपीजनवल्लभत्व करिकें अनन्य उपासक जे हैं। ते भावना नही करें हैं। अन्य धर्मवान में अन्य रूप की भावना करिवे में जो जैसी रीति की उपासना करे,

ताको तैसो ही फलित होय है। अपनो चाहतो भयो जो साक्षात् पुष्टिमार्गीय फल ताकी प्राप्ति नहीं होय। तासों ऐसी रीति सों भावना करनी पुष्टिमार्गीय अर्थ साधक नहीं तातें सर्वदा सत्र भाव करिकें ब्रजाधिप जो श्रीकृष्ण हैं। सोही भजन करिवे योग्य हैं। पुष्टिमार्गीयन को मुख्य धर्म यही है। और श्रीआचार्यन नें जो आज्ञा करी है कि यह करनो ता बिना जो कछु और है। सो सबही अन्य है, सो अपने देश में तथा कुल में हूं जो अन्य प्रकार होंतो होय, तोहू पुष्टिमार्गीय धर्म सूं अतिरिक्त आचरण न करे सोही गीता में कह्यो है स्वधर्म पै चलिवे में जो मृत्यु भी होजाय तो हू श्रेष्ठ है। और परधर्म में चलिवे सूं जन्म जन्मान्तर में हूं अत्यन्त भय और दुःख प्राप्त होय है। तासूं पूर्वोक्त जे श्रीगोकुलेश्वर के चरण कमल के भजन स्मरण को सर्वथा त्याग नहीं करनो कैसे कि जैसे कोई महारोगी उत्तम औषधी के सेवन करे ते कछू रोग की निवृत्ति होय तो वा औषधी को सर्वथा त्याग नहीं करे है। तैसेई, स्वमार्गीयन कूं, भवरोग निवारणार्थ औषधीवत् सर्वथा त्याग नहीं करनो, पहले कहे जो श्रीकृष्ण तिनको सेवन हू पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त जानिके ताही रीति प्रमाण करनो अपने मन की कल्पना करिकें सर्वथा न करनो

तहां पहलें, पुष्टिमार्ग को स्वरूप जाननों अपेक्षित है।

ये मार्ग कैसे प्रगट भयो है सो प्रकार कहें हैं

जब श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी ने अपने मन की अभिलाषा को प्रकार जामें ऐसो शुद्ध पुष्टिमार्ग प्रगट करिवे कूं मन कीयो तब श्रीजी ने जानी कि या मार्ग के के प्रगट करिवे की सामर्थ्य तो मेरे श्रीमुखारविन्द की अग्नि को ही है। ऐसे जानिके मुखाग्नि रूप जो श्रीआचार्यजी तिनकूं ही पुष्टिमार्ग प्रगट करिवे की आज्ञा देत भये। तब श्रीआचार्यजी हू भगवान को अभिप्राय जानिके, श्रीजी ने दीनी जो आज्ञा ताही प्रकार करिके अपनों प्रागट्य भूतल पै करिके पुष्टि भक्ति-मार्ग प्रगट करत भये। ता मार्ग में स्वमार्गीयभक्ति का स्वरूप स्वमार्गीय सेव्यस्वरूप स्वमार्गीय सेवा प्रकार ये तीनोंन में अन्यमार्ग को संसर्ग न मिल जाय ऐसो विलक्षण प्रकार प्रमाण पूर्वक निरूपण करत भये और हू स्वमार्गीय विवेक, धैर्य, आश्रय, त्याग, धर्म, अर्थ,काम, मोक्ष भिन्नता करिके दिखावत भये। श्रीआचार्यन ने प्रगट होयकैं श्रीब्रजपति के चरण कमल की सेवा जहा प्रसिद्ध ऐसो मार्ग प्रगट कियो सो स्वसंतोष के लीये, या लोक में पूजादिमार्ग तो पहले हतो,तोहू भक्तिमार्ग प्रगट कीयो,सो आत्मा के संतोष के अर्थ कीयो है। पूजादिक

मार्ग में श्रीजी कूं तथा भक्तन कूं सन्तोष नहीं है। क्योंकि सेवा में तो साक्षात् पुरुषोत्तम ही सेवनीय हैं। पूजा में विभूति रूप सेवनीय है। सेवा में भक्ति ही नियामक है। पूजा में विधि ही नियामक है, पूजा में तो काल को ही नियामकता है। सेवा में काल नियम नहीं है। भक्त मनोरथ के आधीन हैं। पूजा में तो नैवेद्यादिक को अदृष्ट जनकत्व है। और सेवा में तो भोग धरी जो सामग्रीन को साक्षात् अङ्गीकार है। पूजा सेवा मे तो अत्यन्त वैलक्षण्यता है, महान् भेद है। ऐसे भेद दिखायके स्वमार्गीय भक्ति बढ़वे को प्रकार भक्तिवर्द्धिनी में कह्यो है। कि जा दान व्रत तप होम जपादि करिके जो भक्ति उत्पन्न होय सो मर्यादा भक्ति है। याको फल हू मुक्ति है, और श्रीआचार्यजी ने तो सोई शुद्ध पुष्टि-भक्ति निरूपण करी है।

भक्ति जैसें बढ़े सो प्रकार कहें हैं

प्रथम भावरूपी बीज दृढ़ होय शुद्ध पुष्टिमार्गीय आचार्य अनुग्रह पूर्वक स्वमार्ग प्रकार ते भगवन्निवेदन करे पीछे ताही में एक तत्परता याही मार्ग में स्थिति सोई बीजभाव दृढ़ होय अन्यमार्गीय साधन करिके रहित होय तब ही भक्ति बढ़े तामें स्वमार्गीय साधन कहे हैं। या मार्ग ते अतिरिक्त साधन को त्याग करे

स्वमार्गीय भगवत् धर्म को श्रवरण करे कीर्तन करे भगवत् भजन के अनुकूल गृह में स्थिर रहे स्वधर्म में स्थित रहिके श्रीकृष्ण को भजन करे यहां स्वधर्म कह्यो है। सो वर्णाश्रम धर्म नहीं समभनों क्योंकि वर्णाश्रम धर्म तो नित्य कीये होजाँय हैं। यहाँ तो स्वधर्म करिके भगवत्धर्म ही कहे हैं वर्णाश्रमधर्मन कूं स्वधर्मपने को अभाव है। क्योंकि सन्ध्यावन्दन कूं आरम्भ तें लैके यज्ञपर्यन्त धर्मन कूं शरीर के सुख को हेतु स्वर्गादि लोक के भोग के प्राप्त करायबे वारे हैं। जब पुण्य क्षीण होय जाय तब फेर मृत्युलोक में आय पड़े हैं,तासूं वर्णाश्रमधर्म में शरीरसुख के हेतु है।आत्मा के सुख परलोक साधक नहीं है और भगवत्धर्म है।सो आत्मा के सुख के हेतु है सो श्रीभागवत में सप्तम में कह्यो है। जो जो पुरुष भगवानको सेवन करे हैं,सो सो अपने आत्मा के कल्याण के ही अर्थ करें हैं, यातें निर्विकार भगवद्धर्म ही है। याते भजन तें अतिरिक्त और कोई भी पदार्थ उत्तम नहीं है। सर्व ते उत्तम साधन और सर्व ते उत्तम फल कह्यो है, तासूं या शास्त्र में आपके अङ्गीकृत भक्तन को ही अधिकार है और कोई को अधिकार नहीं है। क्योंकि श्रीआचार्यजी के अनुग्रह सों ही शुद्ध पुष्टिमार्गीयपनो होय है आपकी दिखाई भई जो सेवा स्नेह सहित करे

अथवा स्नेह रहित भी करे तोहू पूर्णपुरुषोत्तम की ही प्राप्ति कारक है। भक्ति पर है पूजामार्ग पर नहीं सम-झनी और शुद्ध पुष्टिमार्गीय रीति सों देखिके होड़ा होड़ी करिके यहां के समान वैसे ही वस्त्र आभूषणादि पात्र सिंहासन रथ हिंडोरा पलना डोल पुष्प मंडली प्रभृति वर्षोत्सव तथा अनेक प्रकार समर्पणरूपी अन्य मार्ग में पूजामार्ग में मर्यादामार्ग प्रभृति में हू देखिवे मे आवें हैं। तोहू तिनको कियो विभूति रूपमें ही मर्यादा-पुरुषोत्तम में ही पहोंचे हैं। तिनकूं पूजामार्गीयपनों ही रहे है, कछू समानता करे सों शुद्ध पुष्टिभक्तिमार्गीयपनो नहीं होय है। मार्गभेद नियामक है।

जो जा मार्ग को है, ताको कियो जो भगवत्धर्मा-दिक सो सब मर्यादा पूजा मार्ग पर ही होय है। मर्या-दापुरुषोत्तम तथा विभूति रूप में ही परिणाम में प्राप्त होय है। तासूं स्वमार्ग रीति सूं ही सेवन करनों उचित है, याते कोइ तरह को विरोध बाधा शङ्का नहीं है। परन्तु भगवत्स्वरूप कों अनुभवादि साक्षात्कार होनो सो श्रीआचार्यजी के, श्रीगुसांईजी के अनुग्रह बिना सर्वथा नहीं होय है। ताते तिनके स्वरूपन कों ज्ञान तथा तिनकी सेवा, स्मरण, नामोच्चारण, गुणगान, अनन्यता दृढ़ाश्रय बिना यथार्थ मार्ग को फल नहीं होय

है। ताते तिनकी सेवा अनन्य चित्त राखिके काया मन वाणी करिके एक तत्परता करिके अनन्याश्रय दृढ राखनो या ठिकाने श्रीआचार्यजी तथा श्रीगुसाँईजी श्रीगोकुल के अनन्यस्वामि की सेवादिक करिवे की आवश्यकता कही सो ठीक है, परन्तु कौन स्वरूप मे कैसो रीति सूं सेवा करनी ऐसी जाकूं चाहना होय तहाँ कहें हैं।

प्रथम तो तिनके सेव्यस्वरूपन में ही वे सदा स्थित है भगवत् मुखारविंद स्वरूप हैं। याते अभेद हैं याते तिनके सेव्यस्वरूप जे भगवत्मूर्ति तिनकी सेवादिक में ही श्रीआचार्यादि की सेवादिक सिद्ध होय है, तथापि जो सेवककूं जुदे भाव करिके सेवादि करनी होय तो सेव्यस्वरूप के दक्षिण ओर श्रीआचार्यचरणादिकन की श्रीपादुकादिक जी विराजे हैं। तिनकी सेवादिक बडे करते आये हैं। ताही प्रमाण करनी उचित है। ताको प्रमाण नारदपंचरात्रि में है, प्रभु के दक्षिण भाग में श्रीगुरुन की पादुका को सेवन करे और श्रुति रहस्य मे में हू कह्यो है, नमः औषधीभ्य; औषधीमय पादुकारूप श्रीवल्लभाचार्य श्रीप्रभुचरण श्रीगोकुल के अनन्यस्वामि ने धारण कियो है। तिनकूं नमन करें हैं लौकिक-दृष्टि करिके काष्टवत् प्रतीति होय है। वस्तु विचारिके

देखे तो श्रीपांदुकाजी कूं, आपके चरणारविन्द को साक्षात् नित्य सम्बन्ध है। यातें आनन्दमय ही है। क्योंकि श्रीआचार्यन के आनन्दरूप कर चरण श्रीमुख उदर आदि हैं, सर्वाङ्ग जिनको बाहर भीतर सूं सदा आनन्दरूप हैं। "नमः पृथिव्यै" उपवेशनस्थान जो श्रीबैठककजी "रजोरूप धारिणे नमः" रजरूप धारण करिवे वारेन कूं नमन करत हैं। जहाँ श्रीबैठकजी हैं, श्रीअडेल में श्रीगोकुल में श्री गोवर्द्धन में, केशीघाट पै श्रीवृन्दाबन में परासोली प्रभृति चौरासी तथा बत्तीस तथा नव श्रीबैठकजी हैं, तहाँ तहां आपको नित्य सम्बन्ध है। यातें ये सबरे स्थल आनन्दमय हैं, आपको साक्षात् रजोमय पृथ्वी रूप हैं। याते ही सर्व सेवनीय, भजनीय, नमनीय हैं, "नमोवाचे वाणी रूप धारिणे नमः" अपने श्रीहस्तन ते लिखे जो पत्र हैं, तिनमें श्रीहस्त तथा वाणी को नित्य सम्बन्ध है। वाणी रूप करिके पत्रन में आप स्थित हैं। याही ते आनन्दमय है। ये सर्व सेवनीय भजनीय नमनीय हैं। और हू तिनकी परशी वस्तु मात्र कूं नित्य सम्बन्ध है, ताकूं भी आनन्दमय स्वरूपात्मक जानिकें सेवादिक करें तो शीघ्र ही मुख्यफल की प्राप्ति होय तहां प्रथम शुद्ध पुष्टिभक्तिमार्ग ते अविरुद्ध जे वर्णाश्रम धर्म तिनमें प्रथम

दशा में स्थित होय करिके ही भगवत् सेवा स्मरणादिक सदाचरण करनो, उचित है।

तातैं वर्णाश्रम धर्मन कों निरूपण करें हैं।

या रीति सों सेवा के करिवे बारे आत्मनिवेदी पुष्टिमार्गीय अपने मार्ग में प्रवृत्त भगवद्भक्त जे दैवीजीव हैं,ते जन्म सूं आदि लेय मरण पर्यन्त दोषन के अभाव निमित्त अपने मार्ग के फल की प्राप्ति के अर्थ पुष्टिमार्ग सों अविरुद्ध जे सदाचार धर्म तामें स्थित होयके, श्रीकृष्ण को भजन करें ताके निमित्त सदाचार कहें हैं। प्रथम तो अपने आचार्यन की आज्ञानुसार वर्णाश्रम धर्मन में प्रवृत्त होनो चहिये, पहिलें चारहू वर्णन के सामान्य लक्षण निरूपण करें हैं। तामें ब्राह्मण को लक्षण श्रीभागवत में कह्यो है. ब्रह्मवृत्ति करके ब्राह्मण वर्तें, तथा पृथ्वी की रक्षा तें क्षत्रिय जीविका चलावे, व्यापार सों वैश्य, और द्विज की सेवा करिकें शूद्र वर्तें, शान्ति और इन्द्रियन का दमन, तप, पवित्रता,सन्तोष, क्षमा, मृदुलता, श्रीकृष्ण में भक्ति, दया, सत्य बोलनो, यह ब्राह्मण की प्रकृति है। १. तेज बल धैर्य और शूरता सहन उदारता उद्यम स्थिरता वैष्णव ब्राह्मण में निष्ठा ऐश्वर्य यह क्षत्रिय की प्रकृति है। २. आस्तिक्यता दान में निष्ठा छल रहित वैष्णव ब्राह्मण को

सेवन यह वैश्य की प्रकृति है । ३. वैष्णव ब्राह्मण गौ देवतान की छल रहित सुश्रूषा तासूं लब्ध जो घन तातें अस्तेय काम क्रोध लोभ मोह सों रहित प्राणी मात्रन को प्रिय और हित में इच्छा यह सर्व वर्णन को धर्म है, सत्य दया पवित्रता शांति त्याग सन्तोष सत्पुरुषन की सेवा सन्तोष यह शूद्र की प्रकृति है, ४. अहिंसा सत्य कामनान की निवृति हरिकथा को श्रवण श्रीकृष्ण को कीर्तन भगवत् की सेवा नम्रता स्वमार्गीयन सों मित्रता भगवत् में आत्म समर्पण यह सम्पूर्ण मनुष्यन को परम धर्म कह्यो ।

वेदोक्त कर्मन के अधिकारी जे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यन कों यज्ञोपवीत के अनन्तर जा क्रम सूं जो विधान कह्यो है,सो करनो योग्य है, तामें पहिले ब्रह्मचर्य को लक्षण कहें हैं, मेखला मृग चर्म यज्ञोपवीतादिकन कों धारण करे और स्नान भोजन होम जप मे मौन रहे क्षौरादिक न करवावे ब्रह्मचर्य व्रत को धारण कियो करे यासों वीर्य को पात कबहू न होय, तीनों हू काल में सन्ध्यादिक करे सेवनीय जे आचार्य तिनके समीप में अनुचर के समान रहे, शैया आसन स्थान सो थोड़ो दूर में हाथ जोड़े रहे यह ब्रह्मचर्य के लक्षण हैं। ब्रह्मचर्य सों आदि लेय जे कर्म हैं तिनकों कहत

भक्तिमार्ग की रीति सों नित्य करिवे योग्य संध्या वन्दनादिक अवश्य करने चहियें। गायत्र्यर्थ प्रकाश में जो स्वरूप कह्यो है। ताही स्वरूप कों जानिकें गायत्री को जप करे याही रीति सो ब्रह्मयज्ञ तर्पण अग्निहोत्र,वलिवैश्वदेव और जे वेदोक्त कर्म हैं, तिनकूं हू करे ता पाछें मध्यान्ह सन्ध्या कौ विधान करे, सायंकाल की सन्ध्या तो सूर्यास्त समय में करे, ताको प्रमाण निबन्ध मे कह्यो है। पाखण्ड मत को बिना स्वीकार किये भगवत् मार्ग के अनुसार सों यथाशक्ति अग्निहोत्रादिक करतो भयो सदा श्रीकृष्ण को भजन करे: मुख्य धर्म के अभाव सों मुख्यफल की प्राप्ति नहीं होय है । भगवत् नाम सों नीचे गिरे तो नहीं कोई रीति सों कलि में तो तर ही जाँय कलि के दोषन सौ भय न होयगो भगवत्मार्ग में स्थित होयकें जो वेदन को अप्रमाण कहे तों भगवन्नाम सों नरक में न जाय, परन्तु नीच योनि में जाय याही सों नीच योनि जो शूद्रादिक हैं, तिनमें हू भगवद्भक्तन को जन्म दीखे है। तासों अग्निहोत्रादिकन को त्याग और वेदन की निन्दा इन दोउन को बिना करे भगवान को सेवन करे यह ब्रह्मचर्य के लक्षण कहे, याके अनन्तर ग्रहस्थाश्रम में प्रवेश करनो चहिये ताके लक्षण कहें हैं ! कुटुम्ब में आशक्त न होंय ग्रहस्थ होयकें

भगवत्सेवा स्मरणादिकन में प्रमाद आलस्य न करे ।
१. ज्ञानवान् या लोक के जैसे स्वर्गादिकन कों हूँ नाशवान् देखे , पुत्र स्त्री धन और जो बन्धुवर्ग हैं, तिनको सगम कैसो है, कि मार्ग मे जैसे कोई को सङ्ग थोड़ी बिरियाँ के ताँईं होयकें फेर बिछुर जाय है वा रीति को है । जैसें निद्रा के अधीन स्वप्न होय, जैसें निद्रा खुले पीछे स्वप्न जैसे नाश कों प्राप्त होय जाय है, तैसे ही स्त्री पुत्र धनादिक, मृत्यु भये पीछे सब छूट जाय है याही रीति सूं विचार पूर्वक ग्रहस्थाश्रम में परदेशी की जैसे प्रीति रहे, कुटुम्ब वारेन करिके बंधे नहीं, मोह तथा अहङ्कार कों छोड़िकें रहे ।

अब पुष्टिमार्गीय वानप्रस्थ कहें---

प्रथम तो भगवान् में प्रेम होयवो अपेक्षित प्रेम सूं आसक्ति होय, आसक्ति सो व्यसन होय, तब वाके भाव को बीजदृढ़ भयो फेरि नहीं नष्ट होय है । जब श्रीकृष्ण में प्रेम होयगो तब अन्य में राग जो प्रीति ताको बिनाश होय, जब उनमें आशक्ति होय तब गृह वारेन में अरुचि होय तब गृहस्थन को यह अनात्मात्व अर्थात् अपनौपनो नहीं दीखे हैं । जा समय में श्रीकृष्ण में व्यसन भयो ताही समय में कृतार्थ भयो । तैसो होयके भी गृहस्थन को त्याग कर एक उनही में मन

लगाय के स्मरण में यत्न करे तासूं सबसे अधिक पर तथा सुदृढ़ भक्ति को प्राप्त होय याही कारण सूं सर्व कुटुम्ब बारेन सों चित्त खेंचिकें केवल गोकुल गोवर्द्धन महावन हरिस्थानन में शुद्धान्त:करण सो सेवा भजन करे।

अथ पुष्टिमार्गीय सन्यास कहे हैं

कर्म मार्ग में तो कदापि कलियुग के दोष सों संन्यास नहीं करिवो उचित है। प्रथम यदि कर्तव्य है तो भक्तिमार्ग में विचार पूर्वक करे यदि विरह के अनुभव के अर्थ यदि परित्याग होय तो ठीक है अपने बन्धन के निवृति के अर्थ सन्यास को वेष (भेष) है, अन्यथा लोक में भगाये वस्त्र दिखाये सों बन्धन की निबृत्ति नहीं है। केवल भावना मात्र हीसों भाव की सिद्धि है। द्वितीय और साधन नहीं दीखे हैं। इन्द्रियन को समूह बलवान है, यासूं सर्वथा होय सके नहीं या मार्ग में तो फलस्वरूप स्वत: साक्षात् परब्रह्मश्रीकृष्ण ही हैं,यासूं माफक नहीं होय है।परम दयालु जो भगवान् है सो स्वस्थ वाक्य नहीं करें हैं। यह जो त्याग है, सो परम दुर्लभ है। केवल शुद्धप्रेम सूं ही सिद्धि होय है और द्वितीय उपाय नहीं ताही सूं पूर्वोक्त प्रकार सों परित्याग (संन्यास) करिबो उचित है। अन्यथा यदि

ऐसें न करे तो स्वार्थ माँय भृष्टता को प्राप्त होय है। निश्चित मेरी मति यह है, श्रीकृष्ण के प्रसाद सूं श्री-वल्लभाचार्य्य ने निश्चित कियो संन्यास वर्णं भक्ति करि-के सिद्ध होय अन्यथा पतित होय जाय। इति संन्यास लक्षण।

सम्पूर्ण आश्रमन को यही धर्म सम्पूर्ण प्राणी मात्र मे मन शरीर वाणी को संयम अर्थात् निग्रह या रीत-सूं गर्भाधानादि संस्कार सूं देहपात पर्यन्त वेदोक्त कर्म भगवान् की आज्ञा के अङ्गभूत निष्काम होयकें तथा क्रमसूं करे भगवत् धर्म तो बाल्यावस्था सूं ही करे या रीति सों स्वमार्ग के अविरुद्ध वर्णाश्रम धर्म कहिके सदाचार को लक्षण कहें।

ऊर्द्ध्वपुण्ड्र तिलक करिवे को प्रकार

वेद की कठवल्ली शाखा में कह्यो है कि जो पुरुष ऊर्द्ध्वपुण्ड्र धारण करिके भगवान को ध्यान करे बोई महात्मा है। तथा शतपथ ब्राह्मण श्रुति में कह्यो है। ऊर्द्ध्वपुंड्र तिलक दो रेखा को सुन्दर दीसे ऐसो धारण करे तो भगवत धाम में स्थित होयकें प्रभु के संयोग सुख कूं प्राप्त होय है। और अथर्वणवेद में कह्यो है, यजुर्वेद की हिरण्यकेशी शाखा में हू येही भाव है। के जा अपनी आत्मा को हित चाहे तो हरि के चरण की

आकृति मध्य में छिद्र राखिकें ऊर्ध्वपुंड्र तिलक धारण करें हैं, सो पूर्ण पुरुषोत्तम कूं प्रिय होयकें पुण्यवान भक्तिमार्गीय मुक्ति को अधिकारी होय है और पुराण में हूँ कह्यो शुद्ध जो भागवत है, हरि के पद की आकृति जैसो तिलक ऊर्ध्वपुण्ड्र करे अथवा दंडाकार करे परन्तु सुन्दर जाको घाट सूधो मनोहर शोभायुक्त छिद्र सहित सूधो कनिष्ठ आंगुरी जैसो दंडाकार नासिकाय ते लेयके केशपर्यन्त दश आंगुल तिलक तो उत्तमोत्तम है। और नौ आँगुल को मध्यम है। आठ सात छः पांच आंगुल ताईं को मध्यम ते हू मध्यम है, ऊर्ध्व-पुण्ड्र कोई भी वर्ण कूं निषिद्ध नहीं है। उपवीतवत धारण करे और जा जा अङ्ग में जैसो जैसी रीति के तिलक कहे हैं, तैसी ही रीत के ब्राह्मण वैष्णव कूं तो द्वादश तिलक उचित हैं और सेवा के समय शंख चक्र गदा पद्म मुद्रा धारण करे जब ताँई, कोट गोदान को फल होय। और सहस्त्रअपराध वाके दूर होंय हैं। परन्तु सेवा पूजा के समय धारण करे ता बिना और समय नही धारण करने जैसे शास्त्र में कह्यो है। सोई अपने मार्ग की परम्परा के अनुसार धारण करे।

अथ तुलसी माला प्रकरण

तुलसी काष्ठ की माला जाके कंठ में दीसे सोही

भागवदीन में उत्तम है । जो श्रीहरि की प्रसादी तुलसी माला धारण करें हैं; भक्ति सहित उनकूं कोई भी पातक नहीं लगे है । और तुलसी माला पहरिके जो स्नान करें हैं ताकूं नित्य ही प्रयाग पुष्कर के स्नान का फल प्राप्त होय है ।

अथ अन्याश्रय प्रकरण

साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम की प्राप्ति तो अन्याश्रय रहित अनन्यता सूं ही होय है । सो गीता में कह्यो है, जो कोई अनन्य होय के भगवान को भजन चिन्तवन उपासना नित्य अभियुक्त करे है, तिनकूं सर्व पदार्थ श्रीजीही देंय हैं और दीने भये पदार्थन की रक्षा हू करे हैं पर पुरुष जो पूर्णपुरुषोत्तम सो तो अनन्य भक्ति करिकें ही प्राप्त होय हैं अन्याश्रय मन वाणी काया करिके न करे स्वार्थ रहित अव्यभिचारिणी भक्ति म्लेच्छ चांडालादिकन को हू पवित्र करें हैं । जे कोई अनन्य भक्त हैं ते तो अन्य देव के दरशन कूं कभी कहीं नहीं जाँय हैं । जब तांई अन्याश्रय है तब तांई प्रभु वाके ऊपर अनुग्रह नहीं करें हैं, क्योंके अनन्य जनके ऊपर ही वात्सल्यता करें हैं और जैसे स्त्री अन्या में आसक्त होय के पति की सेवा करे तो वो पति वासूं प्रसन्न नहीं होय है । तैसे ही ऐसी भक्ति सूं

श्रीजी प्रसन्न नहीं होंय हैं उग्र जे दुर्गादिक देवता तथा घोर रूप जे भूतपति तिनको सेवन जे संसार सूं मुक्त होयबे की इच्छा राखें हैं वे नहीं करें हैं। जो श्रीजी कूं छोड़िकें अन्य देव की उपासना करें हैं। सो कैसो है, कि प्यासो होयकें गङ्गा तीर पै बैठिकें और कूआ खोदे हैं, सो दुर्मति हैं,जो गङ्गा जल में स्वाद पवित्रता है सो कूआ में कहाँ है। भगवान के चरण को आश्रय करिके और अन्यदेव को आश्रय करनो यासूं तो मरनों ही आछो है, क्योंकि हाथी पै चढ़िकें और हलके पै चढ़नों उचित नहीं है। स्वधर्म में चलते में जो मृत्यु भी होय तोहू श्रेष्ठ है, पर धर्म में अत्यन्त भय दु,ख है। अन्य सम्बन्ध की गन्ध कैसी है, कि कन्धा सूं सीस कूं दूर करे ऐसी है नेत्र मूँद लेनो तो श्रेष्ठ है। परन्तु अपने श्रीजी बिना अन्यकों देखनों उचित नही है। शून्य वन में रहनों तो श्रेष्ठ है। पर अन्याश्रितन को संग नहीं करनो और कृष्णाश्रय की टीका में हू कह्यो है, कृष्ण एवं गतिर्मम अंश कलावतारन कूं छोड़िकें केवल श्रीकृष्ण ही हमकूं गति है। ऐसी रीति की अनन्यता अन्याश्रय वर्जित, पुष्टिपुरुषोत्तम कृष्ण तथा श्रीआचार्यजी में करनी, याही सूं पुष्टिमार्ग को यथार्थ मुख्य फल प्राप्त होय है।

अथ असमर्पित त्याग प्रकरण

अब पुष्टमार्गीय वैष्णवन कों सर्व वस्तु प्रभु निवेदित ही ग्रहण करनी, अब वैष्णवन को सगरी वस्तु श्रीठाकुरजी कों निवेदित करिके पीछे स्वीकार करनी सो गरुड़पुराण में कह्यो है। अकाल मृत्यु को हरण करिबे बारो सर्व व्याधि को नाश करिवे बारो ऐसो श्रीविष्णु के चरणोदक को पान करिके पाछे ताकों मस्तक पर धारण करनो बृह्मा डपुराण में कह्यो है, जो पुरुष श्रद्धा करिके युक्त होयके विष्णु के निवेदित कूं ग्रहण करे हैं। विनकूं प्रत्येक ग्रास में असंख्यात चान्द्रायण के फल प्राप्त होंय हैं। वो पुरुष अनेक पुण्य सों युक्त होय हैं तासूँ प्रयत्न करिके निरन्तर विष्णु-भक्ति युक्त पुरुष विष्णु के चरणामृत को ग्रहण करे बृह्म पुराण में कह्यो है कि हजार अग्निष्टोम यज्ञ और सैंकड़न वाजपेय यज्ञ वा मनुष्य ने कीये जिनने श्री-विष्णु निवेदित करिके भोजन कियो जो मनुष्य भक्ति सूं नित्य प्रयत्न करिके विष्णु निवेदन करिके अन्न को प्रसाद लेय हैं, सो पाप सों मुक्त होय करिके धन्य बड़-भागी होंय हैं, बृह्मांडपुराण में कहयो है। पुरुष भक्ति करिके पत्र, पुष्प, फल, और जल, अन्न, दूध तथा औषध और वस्त्र भूषणादिक श्रीहरि परमात्मा कों

समर्पण करिकें स्वीकार करें, और वैसे प्रभु को समर्पण किये बिना आप स्वीकार करें तो तत्काल पाप के समूह कों प्राप्त होय हैं । और पद्मपुराण में भी कह्यो है । जो विमोहित पुरुष प्रभु कों अन्नादिकन को निवेदन किये बिना ग्रहण करे हैं सो अपने पित्रादिक सहित बहुत काल तांई नरक में रहत हैं । और अपने पाप कों भोगे है । और सिद्धान्तरहस्य में भी है कि असमर्पित वस्तु कों सर्वथा त्याग करनो तासूं विद्वान कों सर्वदा श्रीहरि निवेदित सर्व वस्तु को ग्रहण करनो।

अथ असदालाप को प्रकरण

जैसे असमर्पित वस्तु श्रीकृष्ण की प्राप्ति में प्रतिबन्धक है तथा असदालापहू प्रतिबन्धक है तिनको त्याग सर्वथा उचित है । सेवा करिवे के अनन्तर बचे भये काल में असदालाप कों छोड़िकें अन्य व्यसन कों त्यागिकें अर्थ श्रवण कीर्तन स्मरण चिन्तवन करनो व्यवहार हू में हरि में चित्त राखे तासों बचे काल में असदालाप को त्याग कर पूर्ववत् श्रवण कीर्तन स्मरण चिन्तवन करे । सेवा में कथा में सुदृढ़ भक्ति होय । दैवी जीवन कूं आसुर भाव निवृत्ति के अर्थ असदालाप को त्याग कर, "श्रीकृष्ण मेरे रक्षक हैं" यह कहतो भयो रहे,सोई तातचरण ने आज्ञा कीनी है । हे श्री-

कृष्ण मेरे रक्षक हैं। तासूं या लोक में तथा परलोक में चिन्ता रहित है। अब श्रेष्ठ पुरुषन के और आचार कहें हैं।

अथ सदाचार प्रकरण

भागवतोक्त जो अपने सम्प्रदाय तामें स्थित जे सत्पुरुष तिनसों पूछे। पराई निन्दा को त्याग करे। महामन्त्र के रूप को जानिवे वारो होय। आत्मनिवेदन करे पारलौकिक कों देखे। अवैष्णव के घर को जल पान को त्याग करे। भगवान साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम की सेवा में निष्काम होयके तत्पर होय शिवादिकन में द्वेष नहीं करनो। आसन बाँधि के गुरु की सन्निधि में में न बैठे। भगवान के मन्दिर में पैर तथा जंघा न फैलावे। तथा हास्यादिक हू न करे। सिगरे उत्सवन की समाप्ति में भोजन करे। भोजन करिके उत्सव न करे। ऊर्द्ध्वपुंड्र तिलक तथा तुलसी माला बिना एक क्षण हू न रहे। असमर्पित वस्तु कदापि न ग्रहण करे। भगवान् को उच्छिष्ट ही लेय। अन्यमार्गीय की वार्ता भी न सुने। गुरु के पात्र में तथा भगवत के पात्र में भोजन न करे। जीव की अधीनता कदापि न करे। माला मुद्रा तिलक बिना सेवा कों न करे। मंत्र तथा स्तोत्रन कौं प्रकाशित न करे, भगवान् तथा गुरु के

आसन पै अपनी छाया न डारे। स्नानादिक शुद्ध होयके भंगवत्सेवा करे। तहाँ प्रथम देहकृत्य या विधि सूं करे, और ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् सूर्य के उदय होयवे के पूर्व उठिके साक्षात् परब्रह्म श्रीकृष्ण को स्मरण करिके ग्राम सों बाहर या गृह में हाथ में जल को पात्र लेयके शौच अर्थात् छीवे कों जाय: कान में जनेऊ चढाय उत्तर मुख होयके बैठे, मस्तक में वस्त्र बाँध लेय, मुहड़ो ढाँक लेय न तो जोर सों सांस लेनो न थूके रात्रि को दक्षिण की आड़ी मुख करिके बैठे ताके पीछे आलस्य छोड़िके एक बार लिङ्ग में पाँच बार गुदा में पवित्र माटी लगाय के धोवे, तीन बार वाम हाथ में, दशबार दोनों हाथ में माटी लगावे, सात बार पावन में माटी लगावें या प्रकार सूं पवित्र होयकें सोलह बार गंडूष कुल्ला करे, तथा लंघी करिके अन्त में छः कुल्ला करे, ताके अनन्तर अपामार्ग बेल नीम की बारह अंगुल की शुद्ध लाँबी तथा कनिष्ठिका अंगुलि या प्रमाण मोटी की कूची बनायके दातुन करे ताके पीछे बारह कुल्ला करे भगवत् सम्बंधीन में अपनेपनों राखे तिनसे जे भिन्न हैं, तिनसो भिन्नता मानें सत्य भाषण करे प्रिय भाषण करे अप्रिय न बोले विना वैष्णवमार्गीय दीक्षान बारेन सों सेवा तथा पाक न करावे। या रीति

सूं प्रातःकाल स्नान को करे ताके पीछे धुवे भये श्वेत पवित्र धोती उपरणा धारण करिके पवित्र स्थान में पूर्व अथवा उत्तर मुख होयकें आचमन करिके तिलक लगावे बिना छिद्र को तिलक श्वान के पद समान है ताके पीछे प्राणायामादि करिके सन्ध्यावन्दन साक्षात्पूर्णपुरुषोत्तम को भजन नमन मनन कीर्तनादि करे।

अथ आचार विचार प्रकरण

सादाचार को अङ्गभूत ग्राह्य अग्राह्य स्पर्शास्पर्श पदार्थन की शुद्ध अशुद्धि विवेक बिना सदाचार पूर्ण सिद्ध नहीं होय है। क्योंकि प्रथम धर्म को मूल शुद्ध आचार है, तासूं सो प्रकार वर्णन करे हैं भावना सों दुष्ट क्रिया सों दुष्ट काल सों दुष्ट संसर्ग सों दुष्ट को त्याग करे। घृत सों पक्व दूध तथा केवल अग्नि सों पक्व अन्न फल के समान है। यह मनुजी ने कह्यो है। दृष्टि सों पवित्र देखिके पांव धरे। वस्त्र सों पवित्र जल पीवे आर्थात् (छनो भयो) सत्य सों पवित्र वचन बोले, मन सों पवित्र आचरण करे। पांय धोय के शेष जो जल पीत को शेष संध्या को शेष जो जल है, सो श्वान के मूत्र समान है। ताकों पान करले तो चन्द्रायण करें। लहसुन गाजर पियाज मद्य मांस मसूर कलिंग श्वेत वृन्ताक मूलिका जरो अन्न कदापि न भोजन करे।

यावनी भाषा कों उच्चारण कदापि न करे जो कंठ हू में प्राण आय जाँय तोहू न बोले तथा जैनि के मन्दिर में न जाय। जो हाथी हू पीड़ा करे तोहू न जाय और नीच जे पशु पक्षी जीव हैं तिनको देख्यो स्पर्श्यो सूंघ्यो तिनके संसर्ग को अन्नादिक ग्रहण न करें सो कौन कौन है तिनकूं दिखावें हैं। दुष्ट पाखंडी पतित दुष्ट कर्मी ईश्वर कूं माने नहीं अवैष्णव ब्राह्मण तथा शूद्र एकादशी के दिन अन्न भोजन करिवे वारे शूकर कूकर कौआ ऊँट कूं आदि लैके नीच पशु पक्षी तथा रजस्वला सूतकी प्रभृति व्यभिचारिणी स्त्री तथा पुरुष वृषलीपति के देखे सों स्पर्श सों तथा भोजन को शेष अभक्ष्य सो युक्त सों संसर्ग दोष कहावे है। श्वान (कुत्ता) बिलाई चांडाल काक इनको दृष्टि दोष एकसो ही है। जे विमुख हैं, शाक्त हैं, शैव हैं तथा भैरव के पूजिवे बारे अन्य देवतान के उपासकन को दृष्टि दोष बचानो ये हू वैसे ही हैं, अति उष्ण अति रूक्ष बासी सूंघ्यो भयो अन्य को देखो भयो अन्नादिक स्वकार्य में नहीं लावनो रजस्वला चांडाल पतित सूतकी मृतक इनको स्पर्श करिके सचैल स्नान सों शुद्ध होय। यदि वस्त्रादिकन के व्यवधान सों स्पर्श होय तो साक्षात् स्पर्श कह्यो है। स्पर्श में जो कही है, वह वस्त्र के भीतर भी जाननी

स्नानादि करिके यदि काष्ठादिकन कों स्पर्श होय तो नाव के स्पर्श समान आचमन मात्र सूं शुद्ध होय रजस्वलादि स्पर्श में दो मनुष्यन को स्नान तीसरे को आचमन अर्थात् कोई मनुष्य को रजस्वला स्पर्श भयो वा मनुष्य को जो स्पर्श करे तो स्नान सों शुद्ध होय वाको जो स्पर्श करे सो आचमन मात्र सों तीसरो शुद्ध होय गौतमजी ने तो तीसरे हू को स्नान कह्या है। चौथे को आचमन स्नान तीर्थादिकन में करे अथवा उष्ण जल सों यदि रात्रि वो चांडालादिक को स्पर्श होय तों रात्रि ही में स्नानादिक करने। यदि स्पर्श करिके रात्रि को स्नान नहीं करे तो सो भाग अशौच और विशेष होय, यदि सूर्य के अस्त समय स्पर्श होय तो सुवर्ण अग्नि आकाश के दर्शन सों शुद्ध होय है, रात्रि में जो जन्म मृत्यु रजो धर्म होय ताके विचार कहें हैं। सूर्य उदय होयवे के अनन्तर स्त्री रज को देखें तो तथा जन्म होय अथवा मृत्यु होय तो जाको बार ताही की रात्रि है रात्रि के तीन भाग करे जो तीसरे भाग में जन्मादिक होय तो पूर्व दिन लेंनों रजस्वला स्नान करिकें अठारह दिन के पूर्व यदि होय तो अशौच नहीं है अठारहनें दिन एक दिन को उन्नीसमें दिन दो-दिन को बीस सों लैके तीन दिन को यदि रजस्राव

बिना जाने होय तो सर्व कर्मन में शुद्धि है। शैव पाशु-पत नास्तिक दुष्टकर्मन में स्थित द्विज और शूद्र को स्पर्श करिके सचैल (वस्त्र सहित) जल में प्रवेश करे स्नान करिके पान करिके छींक कें शयन करिकें भोजन करिकें मार्ग में चलिवे सों अधो वायु के निकसिवे में थूकवे में क्रोध करिकें भोजन करिकें मार्जार तथा मूसा कें स्पर्श में प्रहास में वस्त्र को बदल के पुनः आचमन करिवे सों शुद्ध होय है। तीर्थ में, विवाह में, यात्रा में, देश के विप्लव में, नगर तथा गाम के दाह में स्पर्श और अस्पर्श में दोष नहीं है। तथा आपत्ति में कष्ट में रोग के भय में पीड़ा में माता पिता गुरुन की आज्ञा में गौ-शाला में अश्व की शाला तैलयन्त्र इक्षुयंत्र में कोल्हू में स्त्री में राजकुल में पवित्रता को विचार न करे। विवाह उत्सव यज्ञ संग्राम मनुष्यन के समूह में भागवे में बन में जङ्गल में स्पर्शास्पर्श दोष नहीं। देवालय के समीप में यात्रा के अर्थ आये भये जे चांडाल पतितादिक हैं, तिनको स्पर्श कदाचित् होय जाय तो स्नान न करे। दीवा सूप शय्या पादत्राण बुहारी इनको स्नान करिके यदि स्पर्श कर लेय तो पुनः स्नान करे सूं शुद्ध होय है। बकरी की धूर गर्दभ की रज बुहारी की रज दीवा मन्चान की छाया पूर्वकृत पुण्यन को नाश करें हैं सूप

के वायु नख को जल अँगोछा तथा परदनी को जल केश को जल ये हू पूर्वकृत सुकृत को नाश करें हैं। मल तथा मूत्र को त्याग जोड़ा पहिरिके न करे आहत वस्त्र कों प्रोक्षण अर्थात् छींटा देवे सों शुद्ध होय। एक बार को धोयो भयो नवीन श्वेत जो पहिरो भयो न होय वह आहत कहावे, सब कर्मन में पवित्र है। वीर्य रुधिर छेद पीव मूत्र पुरीष चीकनो दुर्गन्ध पुरानो यह नौ दोष वस्त्रन में हैं उपस्करसों आच्छादित जो शय्या तथा लाल वस्त्र पुष्प यह छींटा मात्र दिये सों शुद्ध होय हैं। पशु सदा पवित्र है, ऋतुकाल से भिन्न समय में स्त्री हू पवित्र है। ब्रह्महत्यादि पाप ऋतुकाल में स्त्री को प्राप्त होय है। द्रव्यन की जे खान हैं, वे स्वयं शुद्ध हैं। लैवो देवो जा हाट पर होय वो भी शुद्ध है। बकरी तथा घोड़ा मुख के भाग सों शुद्ध हैं गौ पीठ सों पवित्र हैं। फूले भये वृक्ष ब्राह्मण भस्म मधु सुवर्ण कुश तिल सर्वदा पवित्र हैं अपामार्ग शिरीष मंदार पद्म आमला मणिमाला सर्षप दूर्वा अक्षत बालू लोह हरिद्रा चन्दन यव पलाश खदिर पीपल तुलसी वट इनमें हू जल गोवर तथा गोमूत्र विशेष पवित्र हैं। द्रव्य की शुद्धि द्रव्य तथा वचन करिकें संस्कार सों होय हैं। अपनो सामर्थ्य देखिकें अथवा अपनी शक्तिता देखिकें बुद्धि करिकें धन

को सुभीता करिकें देश अवस्था के अनुसार शुद्धि करे बिना स्नान किये काष्ठादिकन सों वस्त्र लेयवे में दोष नहीं ऊनी वस्त्र रेशमी वस्त्र मृग चर्म बिनके मध्य मे जो वस्त्र हैं और यदी अशुद्धि को विचार होय तो ते छींटा मात्र सें शुद्ध होय हैं। ऊन को वस्त्र तथा कतान ऊपर लपेटे होय जा वस्तु में दो वेर ता ऊपर को निकार डारे तो भीतर की वस्तु शुद्ध होय हैं। वीर्य सों युक्त मूत्र पुरीष की मृत्तिका को स्पर्श सूं रजस्वला सों छीयो भयो ऊन को वस्त्र शुद्ध होय है। सुवर्णादिक के पात्र धोवन मात्र सों शुद्ध होंय हैं। तैजस मणीक के पात्र सर्व पाषाण मात्र के पात्र पाषाण सों जल सों मृत्तिका सों शुद्ध होय हैं, तांबा चांदी पीतल सीसा रांगा जसत अशुद्ध होय जाय तो २१ बार यव के चून सों मांजिवें सों शुद्ध होय है, पीतल को छोड़िकें वो ताप सों शुद्ध होय है, ताम्र पात्र में जो गव्य है तथा पीतल के पात्र में जो मधु गुड़ सों युक्त अदरख तत्काल मद्य समान होंय हैं, घृत के बिना होम कार्य में गौ-दोहन में पाक करिवे में स्नान तर्पण दान में तथा पात्र को धरो गव्य अर्थात् दूध दही दूषित नहीं होय है।

आसन शय्या यान रथ पालकी नौका नाव मार्ग तृण यह वायु तथा सूर्य सों शुद्ध रहे हैं। ये अपने ही

शुद्ध है, पराये तो अशुद्ध हैं, । तोषा की गादी रजाई पुष्प लाल वस्त्र सूर्य के सामने राखैं सों पुनः जल के मार्जन सों अशुद्ध भये शुद्ध होय हैं । शाक जड़ फल जो हैं जितने अपवित्र हैं । तितनों ही भाग निकारि डारे पुनः जल सों धोय के ग्रहण करे सब कर्मन में घृत मधु तेल फल जो हैं मलेक्ष के बासन में धरे होंय तौ हू बाहर आवन मात्र सों शुद्ध होय जाँय हैं । तथा हाट सब पवित्र हैं । बनायबे वारेन के हाथ हू पवित्र है । तथा दूध दही म्लेच्छ के हाथ को भी अशुद्ध है । फल फलारी तो मलेच्छादिकन की हाट को शुद्ध हैं । लोहार बढ़ई वैद्य दासी दास राजा यह तत्काल ही शुद्ध होय हैं । मक्षिका (माखी) पवित्र है।घृत दूध दही गाँडे को रस गुड़ मधु मठा यह शूद्र के भाँड में धरयो भयो हू शुद्ध है । जो बहुत जल वारे कूप में दुर्गन्धादिकन सों कोई मरे जीव कों शङ्का होय तो तीस घड़ा जल के निकारिवे के नन्तर शुद्ध होय जाय है । जो ज्ञान न होय । यदि ज्ञान होय कि यामें जीव है, तो वाकों निकरवाय के यदि माटी को घड़ा होय तो त्याग करे, धातु को होय तो तपाय के माँजि के शुद्ध करे । वा कूप मे गोवर गौमूत्र डारे सों वायु के स्पर्श सों शुद्ध होय है । गृह की पृथ्वी गोवर गौमूत्र मृतिका लेप सों

शुद्ध होय है ।

वायु के संग में धूल तथा निरन्तर गिर रही जो जल की धारा सों शुद्ध है।गो घोड़ा माछी पतंग बकरी हाथी संग्राम में छत्र सूर्य चन्द्रमा की किरण सूं ही पवित्र हैं, पृथ्वी अग्नि धूल वायु जल दधि घृत दूध वे स्पर्श में पवित्र ही हैं। धूप भी शुद्ध है। परन्तु इतनी वस्तु अपवित्र हैं। दाग गांडा गोदोहनी शुद्ध है पंखा आदि की कृत वायु वैसो पवित्र नहीं है। माला सूप मुख की वायु सुकृत को हरण करे है । ये बाह्य शुद्ध कही। अब आत्मशुद्धि कहें हैं।

विद्या सों तप सों प्राणायाम सों तीर्थाभिषेक सों व्रत दान सों जप सों वैसी शुद्धि नहीं होय है जैसी हृदय में साक्षात् श्रीकृष्ण परमात्मा के स्मरण सों आत्मशुद्धि होय है। कोई केवल साक्षात् निस्साधन भक्ति मात्र सों सर्व पापन के समूहन को नाश करे है। जैसें सूर्य अन्धकार को नाश करे है यह और सत्पुरुषन के आचरण में दोष के आरोपण करिबे बारो हरि के आवेश को प्रतिबन्धकर्ता काम व्यभिचार है सब दोषन को मूल स्थान है। पुष्टिमार्ग के आदि में जिनके ऐसे काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्यादिक ते प्रतिबन्धक रूप अंधकार है तासूं मुख्य कामाख्य दोष व्यभिचार

बर्णन करे हैं। काम है सो भगवान की प्राप्ति में अत्यंत प्रतिबन्धक है यासूं याको त्याग सर्वथा करिवे योग्य है सो विवरण में कह्यो है। सब दोषन में प्रथम काम को विवेचन निरूपण करें हैं। जाकूं विपरीत काम उत्पन्न भयो ताको धर्म कर्म सर्वनाश होय है यासों सदा विषय कोई आवेश हृदय में रहें है और चित्त कूं विक्षेप को हू यही कारण है और रजोगुण जे राजस मोह याही सों आछी रीत सूं उत्पन्न होय है और मुख के ऊपर धूर गेरिबे बारो व्यभिचार है (१) भगवत् आवेश को यह विरोधी है और बुद्धि को बाधक हैं। सत्कर्मन को नाशक है सम्पूर्ण लौकिक आसक्तिन को साधक है चित्त को अशुद्धता को आदि कारण है ज्ञान की उत्पत्ति में बाधक है और पुष्टिमार्ग में चलिवे बारे कूं महाशत्रु है। और वैराग्य के अभाव को साधक है सन्तोष को घातक है याही सूं अत्यन्त लोभ उत्पन्न होय है और सर्व इन्द्रियन को भगवान तें बहिर्मुख करे

कूं नही जाने है । अहो ! बड़े मोह जाल में बँधे हैं, अहो ! पश्चात्ताप और खेद होय है ये उत्तम मनुष्य देह अनेक राजान के मुकुटमणि अपनी देह कूं स्त्रीन के क्रीड़ामृग कूं करें हैं तिनकूं धिक्कार है कितनो मोह! ऐसो देह को स्त्री के वश कर दियो, वैभव कूं छोड दियो, ऐसी कुलटा स्त्री के पीछे उन्मत्त की नाँई रोतो फिरे है;यह स्त्री के पीछे दौड़े है। तेज ईश्वरपना और महिमा कहाँ से होय जिनको चित्त स्त्रियन सों हरण होय है विनने विद्या सीखी वासूं कहा भयो तप कीयो तो तप सूं भी कहा विशेष और त्याग सूं ही कहा भयो और शास्त्र सीख्यो वा श्रवण कियो वासूं भी कहा भयो कछू नहि सर्व व्यर्थ है । और एकान्त में रहिवे सूं भों कहा भयो, तथा मौन धारण कियो तासूं हूँ कहा भयो जाको चित्त स्त्री ने हरण कियो विनके सगरे साधन व्यर्थ हैं । सत्य स्वार्थ रूप परमार्थ को नहि जाने है । मूर्ख है, और अपने कूं पंडित माने है, तिनकूं धिक्कार है ! मनुष्यन को ईश्वर ऐसे राजपने को पायकें स्त्री बैल और गर्दभ की सी नांई स्वाधीन कर लेत हैं विषयन को उपभोग करिवे सों जैसें घृत पडे सूं अग्नि विशेष वृद्धि को प्राप्त होय है । परन्तु शान्त नहि होय है, वैसे शांत नहि होय है । आत्मा-

राम और अधोक्षज ऐसे ईश्वर विना और कौन छोड़ावे है, कुमार्ज में परे भये ऐसे और पेट तथा उपस्थ के लिये जो उद्यम के विषे तत्पर हैं ऐसे असज्जनों के साथ रहिके विषय में जो रमते हैं। सो प्रथम की नांई नरक में ही पड़त है सत्य, शौच, दया, मौन बुद्धि, श्रीयश, क्षमा, शम, दम और ऐश्वर्य ए सिगरे जो दुर्जन के सङ्ग सों नाश कों प्राप्त होय है अशान्त और मूढ और जिनके चित्त खंडित होय रहे हैं। ऐसे असाधू कों जो शोच्य है, और स्त्रियन के क्रीड़ा के मृग हैं विनको सङ्ग न करे और के साथ रखिवे सूं वैसो मोह नहिं होय है, जैसो स्त्रियन के और स्त्री के संगिन को संग करिवे सूं होय है। ब्रह्मा ने स्रजे ऐसे मनुष्य के विषे ऋषिवर्य नारायण विना यह जगत के विषै स्त्रीमयी माया सों अखंडित बुद्धिवारो कौन हैं! कोहू नहिं है, दिशान को जीतिवे बारे कों भी मेरी स्त्री रूपिणी माया पाउँ के नीचे दवाय देय हैं देख्यो मेरी माया को वल! कैसो है जो स्त्री केवल भ्रकुटी के बिक्षेप मात्र सूं बड़े बड़े दिग्विजजियन कों अपने चरण सूं दबाय देहै। योग कों परम पार के विषे आरोहण करिवे की इच्छा बारो कदाचित स्त्रियन के विषै सङ्ग कों न करे

क्योंकि श्रीजी की सेवा में जिनकूं अन्तरात्मा को लाभ भयो है ऊपर कह्यो ऐसो परम योग को आरोहण करिवे की इच्छा वारो कबहू स्त्री के और स्त्रीसगियन को सङ्ग नहिं करे है और श्रीजी की सेवा सूं जिनकों अन्तात्मा की शुद्धि भई है ऐसे पुरुष स्त्रीयादिकन कूं नरक के द्वार रूप कहें हैं। प्रभु की माया को जो स्त्री यह मेरो पुरुष है, ऐसो माने है और मोह सूं पुरुष भी स्त्री रूप देख पड़ती ऐसी मेरी माया रूप स्त्री के संग सूं मोह कूं प्राप्त होय है गृह रूप ऐसी और दैव ने प्राप्त कियो ऐसो मृत्यु रूप वह स्त्री कों जाननी ऐसे स्त्रीयादिक के विषे काम करिवे सूं भगवत्सेवा में प्रतिबन्ध होय है, तासूं भगवदीयन को है सो स्त्रीकूं भगवत्सेवा में सहाय करिवे बारी है, ऐसो जानिकें प्रेम करे परन्तु कामबुद्धि सौं प्रेम करे नहिं, और वाको सङ्ग गृहस्थाश्रमादिक सुख कों भी काम बुद्धि से न करे परन्तु यामें भगवत्सेवा में तत्पर पुत्र होयगों वैसी बुद्धि सों गृहस्थाश्रम करे त्रैसे करिवे बारे भगवदीयन को भी गृहस्थाश्रम बाधक नहिं होय है। और या जगत में कौन प्रसन्न है ? और आश्चर्य कहा है ? वार्ता कहा है ? और उत्तम मार्ग कौन को है ? ताको समाधान ये है कि दिवस को अष्टम भाग

जो सायंकाल ता पर्यन्त भी जो अपुने घर में अनिषिद्ध व्यवहार तें प्राप्त भयो जो धन तासूं साग रोटी करिके जी श्रीजी कूं भोग धरिकें महाप्रसाद लेय और सेवा स्मरण करे कोई को देनों न होय क्लेश को वास न होय सोई या जगत में प्रसन्न है और आश्चर्य ये है कि नित्य प्रति अनेक जीव यमलोक में चले जांय हैं और जो यहां शेष रहे हैं वे यहां जगत में सदा रहिवे की ही इच्छा करें हैं। देखत देखत हू भूल जांय है, यासूं बढ़ती और आश्चर्य कहा हैं ? और वार्ता या या जगत की ये है कि महा मोहमयी तो कढ़ाई है। ताके नीचे सूर्य रूप अग्नि है, रात्रि दिन रूपी ईंधन है, बारह मास छः ऋतु जो चाहे सो बेर बेर में आवे है जाय है ता कढ़ाई में भगवत् नामस्मरण भजन बिना मनुष्यन की आयुष्य कूं काल भूंज डारे है, दिन दिन प्रति आयुष्य क्षीण होय हैं तातें उत्तम कार्य धर्म आचार सेवा स्मरण कीर्तन नामोच्चारण जो काल करनों होय सो आज करनो और आज करनों सो याही क्षण करे जो क्षण जाय है, सो फेर नहीं आवे है, येही याकी वार्ता है और सर्व मार्गन में मुख्य एक मार्ग है क्योंकि श्रुति स्मृति पुराणादि को विरोध दूर करिवे निरधार किया जो शुद्ध भक्तिमार्ग तामें चलै जो महा-

पुरुष श्रीआचार्यजी तिनके ही हृदय रूपी गुहा में मुख्य धर्म रह्यो है। तासूं जा मार्ग में वे चले है सोही मुख्य-मार्ग है। ता मार्ग में ही उनके पीछे चलनो उचित उचित है। हे श्रीगोवर्धनधर! राधावल्लभ! दैवी जीवन कूं स्वमार्ग में चलाय के कल्याण करो। आप सर्व,सामर्थ्ययुक्त परम कृपालु हैं।

इति निजजनदास विरचित पुष्टिमार्ग सार संग्रहः।